चकमक

अक्टूबर, 1995

बाल विज्ञान पत्रिका

रु. 5.00



संचार : धुएं से टेलीफ़ोन तक .....



रानीबाई पंवार, बारह वर्ष, फतेहपुरखेड़ा, देवास, म.प्र.



सुनीता फिलोमीना,
छह वर्ष, भोपाल, म.प्र.

आवरण : शिवेन्द्र पांडिया



● आमिर, पाँच वर्ष, कबीटपुरा, भोपाल, म. प्र.

चकमक

मासिक बाल विज्ञान पत्रिका

वर्ष-11 अंक 4 अक्टूबर, 1995

संपादक

विनोद रायना

सह-संपादक

राजेश उत्साही

कविता सुरेश

संपादन सहयोग

टुलटुल विश्वास

कला-सज्जा

जया विवेक

उत्पादन/वितरण

कमलसिंह, मनोज निगम

चकमक का चंदा

एक प्रति : पांच रुपए

छमाही : पच्चीस रुपए

वार्षिक : पचास रुपए

डाक खर्च मुफ़्त

चंदा, मनीआर्डर या बैंक ड्राफ़्ट से एकलव्य के नाम पर भेजें।

कृपया चेक न भेजें।

काग़ज़ : यूनिसेफ़ के सौजन्य से।

पत्र/चंदा/रचना भेजने का पता

एकलव्य,

ई-1/25,

अरेरा कॉलोनी,

भोपाल-462016

(म. प्र.)

फोन : 563380

122 वें अंक में...

विशेष

12 ❑ संचार : धुएँ से टेलीफोन तक

26 ❑ कबूतर ......जा.....जा......

कहानी

27 ❑ हम पढ़ रहे हैं

कविताएँ

11 ❑ दो कविताएँ

22 ❑ बाँकी बाँकी धूप

37 ❑ जंगल

हर बार की तरह

4 ❑ मेरा पन्ना

10 ❑ हमारे वृक्ष-42 : चालता

30 ❑ माथापच्ची

और यह भी

2 ❑ पाठक लिखते हैं

23 ❑ खेल काग़ज़ का : अँगूठी

32 ❑ कैसे काम करती हैं चीज़ें : टेलीफोन का चोंगा

34 ❑ श्रद्धांजलि : डॉ. सुब्रह्मण्यन चंद्रशेखर

38 ❑ तुम भी बनाओ : टेलीग्राफ़ यंत्र

एकलव्य एक स्वैच्छिक संस्था है जो शिक्षा, जनविज्ञान एवं अन्य क्षेत्रों में कार्यरत है। चकमक, एकलव्य द्वारा प्रकाशित अव्यवसायिक पत्रिका है। चकमक का उद्देश्य बच्चों की स्वाभाविक अभिव्यक्ति, कल्पनाशीलता, कौशल और सोच को स्थानीय परिवेश में विकसित करना है।

पाठक लिखते हैं

जून, 95 अंक के कहानी, कविता, बाल चित्र बड़े मन लुभाने वाले थे। चकमक ही एक ऐसी बाल पत्रिका है जिसमें छोटे बच्चे अपनी प्रतिभाओं को प्रस्तुत कर सकते हैं।

❑ राकेश वर्मा, करवड़, झाबुआ, म.प्र.

एक मित्र के सौजन्य से 'चकमक' देखने को मिली। इतनी सुरुचिपूर्ण और वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करने वाली पत्रिका निकालने के लिए बधाई स्वीकार करें।

❑ विभूति नारायण राय, बीकानेर, राजस्थान

मैं चकमक पढ़ने का बहुत शौकीन हूँ, लेकिन हमें हमेशा चकमक पढ़ने को नहीं मिलती है।

जून, 95 का अंक पढ़ने को मिला। इस अंक में नानी आई, थप्प रोटी थप्प दाल, मनुष्य महाबली कैसे बना? अपने नाम की सील बनाना, ढालमापी आदि रचनाएँ बहुत ही मनोरंजक हैं। अपनी सील बनाने का मैं प्रयास कर रहा हूँ।

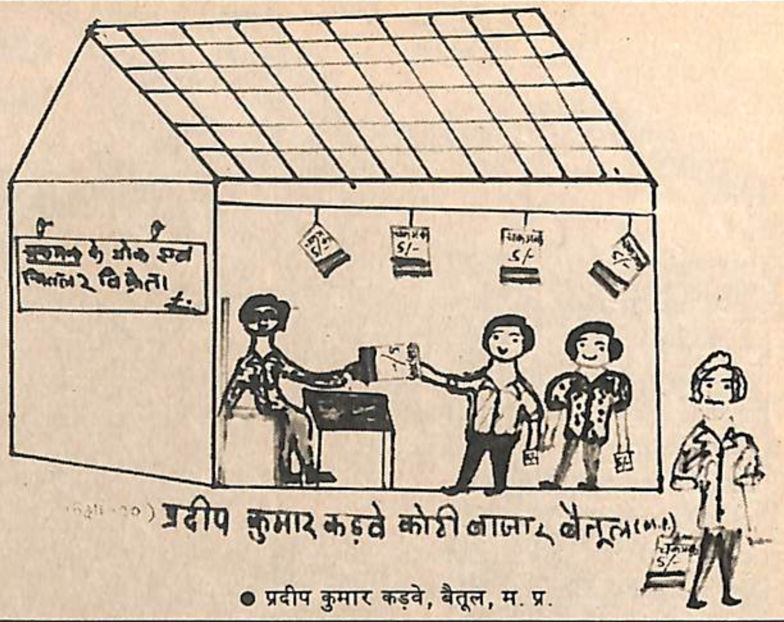
❑ चन्द्र प्रकाश पाण्डेय, नवमीं, कंछबार, सीधी, म.प्र.

चकमक के ज़रिए आप बहुत अच्छा काम कर रहे हैं। उत्तरोत्तर प्रगति की कामना करता हूँ।

❑ हसन जमाल, सम्पादक 'शेष' जोधपुर, राजस्थान

मैं आपकी 'चकमक' बालविज्ञान पत्रिका का नियमित पढ़ाकू हूँ। मुझे चकमक की हर प्रस्तुति अच्छी लगती है। पर उसके दाम के हिसाब से पत्रिका बहुत पतली है। इसलिए आपसे यह निवेदन है कि आप 'चकमक' के कागज़ बढ़ाने के लिए कुछ रोचक जानकारी पेश करें और विज्ञान गल्प भी।

❑ कीर्ति मोहन्ति, महूदा, धनबाद, बिहार



● प्रदीप कुमार कड़वे, बैतूल, म. प्र.

हमें आपकी पत्रिका बहुत अच्छी लगी। मुझे तथा परिवार वालों को हमेशा चकमक का इंतज़ार रहता है।

इस पत्रिका में अधिकतर पढ़ाई-लिखाई की बातें ही बताया करें। हमें इनकी ज़रूरत रहती है।

❑ संतोष कुमार डांले, ग्यारहवीं, सोयत, सीहोर, म.प्र.

मैं चकमक का निरन्तर दो वर्ष से पाठक हूँ। चकमक जून, 95 वाला अंक बहुत मनोरंजक रहा। हास्य नाटक छींक और थप्प रोटी थप्प दाल बहुत मनमोहक थे। मेरी एक इच्छा है कि आप विज्ञान प्रयोग और ज्ञानवर्द्धक बातें ज़्यादा से ज़्यादा छापें। माथा पच्ची, हमारे वृक्ष भी अच्छे थे। आप यह न समझें कि मैं अपने पत्र को छपवाने के लिए चापलूसी कर रहा हूँ। मैंने एक कविता भी लिखी है-

वह देखो आया चकमक
मन में खुशियाँ लाया चकमक
मैं चकमक बड़े चाव से पढ़ता
पढ़ते-पढ़ते कभी न थकता
माथा पच्ची मन बहलाए
विज्ञान प्रयोग ज्ञान बढ़ाए
यह आता तो खुशियाँ लाता
न आता तो ग़म दे जाता।

❑ अभिषेक कुमार, सातवीं, धनबाद, बिहार

मैंने चकमक पत्रिका के लिए प्रारम्भ में एक वर्ग पहेली भेजी थी, आपने वो छापी। जिससे मैं उत्साहित हुआ। मैंने फिर आपको एक छोटी कहानी भेजी वो भी छप गई, मैं फिर उत्साहित हुआ। उसके बाद मैंने कई वर्ग पहेलियाँ व अन्य रचनाएँ भेजीं लेकिन आज तक भी आपने उनका कोई जवाब नहीं दिया। मैंने आपको कई पत्र लिखे, लेकिन आपके कानों पर जूँ ही नहीं रेंगती।

चकमक एक छोटी पत्रिका है। चकमक को अधिक अच्छा बनाना आपके हाथों में है, लेकिन शायद इस पर कोई ध्यान ही नहीं देता। चकमक को अधिक अच्छा बनाने के लिए आपको कुछ स्तम्भ शुरू करने चाहिए। जैसे सवाल-जवाब प्रतियोगिता, चुटकुले, पहेलियाँ, महापुरुषों की संक्षिप्त जीवनियाँ। चकमक की पृष्ठ संख्या अधिक करें। चकमक में चित्रों की संख्या बहुत कम करें। ये चित्र बकवास होते हैं। पाठकों व लेखकों के विचार व शिकायतें चकमक में छापें। इनको अपनाकर आप चकमक को अधिक अच्छा बना सकते हैं। लेकिन आप लोग व्यवहार में अधिक ध्यान नहीं देते। आप पाठकों के प्रशंसा पत्र तो छापते हैं, लेकिन शिकायत पत्र क्यों नहीं छापते?

❑ नीरज पोरवाल, किशनगंज, राजस्थान

हमें अपनी बाल विज्ञान पत्रिका हर महीने नियत समय पर मिलती है। हम सब दोस्तों को पढ़ने से बहुत खुशी होती है। चकमक आते ही हम सब चकमक की कहानियाँ, छवियाँ, माथापच्ची, विज्ञान की बातें और काग़ज़ से बनाई हुई चीज़ें और वैज्ञानिक खोज और नियम में लगे रहते हैं। मम्मी-पापा की डाँट पर भी हम चकमक नहीं रखते।

❑ जीगीष कुमार गुमजी भाई गामीत,
खरसी, गुजरात

जून 95 का अंक मिला।

पण्डिताइन के मिर्च कूटे जाने पर पण्डित को तो छींक आ ही रही है (छींक भी 'प्राइम टाइम' में आ रही है जब वह "रामायण" बाँच रहे होते हैं, स्पॉन्सर्स की क्या कमी "रामायण" के लिए ...वे तो पर्दे की पीछे' होते हैं) साथ-साथ बन्दर, तोता और गिजाई को भी छींक आ रही है, लेकिन इस पूरी प्रक्रिया में चूहा, जो कुछ भी अपने को फाँसने वाली जाली के साथ कर रहा है, वह मज़ेदार है, चित्र में जो कुछ भी हो रहा है उसका मज़ाक उड़ाता हुआ चूहा वाक़ई मज़ेदार बन पड़ा है। कवर के दाईं ओर निचले कोण से पूरे दृश्य को उसके देखने का अंदाज़ दिलचस्प है। शिवेंद्र पाँडिया को मेरी शुभकामनाएँ। बंटी की कविता- "नानी आई" बहुत अच्छी लगी। अपने 'हम उम्र बन रहे दोस्तों' को कैसे ज़्यादा विवेकपूर्ण ढंग से समझा जाए यह आज भी मुश्किल प्रश्न बना हुआ है। बल्कि कभी-कभी तो मुझे लगता है कि आज यह प्रश्न ज़्यादा जटिल और गम्भीर है जब बातें पीढ़ियों के संदर्भ में की जाती हैं। क्योंकि बच्चों को लेकर अभी भी बहुत सीमित अर्थों में लिखा-पढ़ा-जाना गया है। आज तो स्थिति इतनी ख़राब हो गई है कि हमारे लिए बच्चे और स्त्रियाँ महज़ 'कॉलम' भर रह गए हैं।

अख़बार और बिकने वाली पत्रिकाओं में बच्चों के लिए एक कार्टून छाप दी, बस हो गया "इति श्री रेवाखण्डे।" हाँ, यही तो समझ है हमारी कि बच्चों के जीवन, अस्तित्व, सरोकार को एक कार्टून-स्ट्रिप तक ही समझते हैं। जीवन की मुख्यधारा में इनका क्या मतलब! सच पूछिए, तो आज हम बच्चों के जीवन से उतनी ही तेज़ी से गुम हो रहे हैं जितनी तेज़ी से क्विज़, 'कोर्सबुक' और केबल नेटवर्क घुसते आ रहे हैं- और इस दूसरी स्थिति का आगमन पहली स्थिति के विलोप में हो रहा है। आदर्श स्थिति की बात तो छोड़िए; यह एक बेहद ख़तरनाक स्थिति है। ऐसे में 'चकमक' का प्रयास प्रेरणादायी है। मुझे खुशी होती है अपने 'हमउम्र बन रहे दोस्तों' से इस ज़रिए मिलते हुए।

❑ संतोष चंदन, कला सम्पादक,
समकालीन जनमत, दिल्ली

मैं आपकी पत्रिका चकमक का नियमित पाठक हूँ। चकमक में छपी हर सामग्री मुझे बेहद पसन्द है। ख़ासकर माथापच्ची, खेल काग़ज़ का, तुम भी बनाओ, हमारे वृक्ष तथा खेल खेल में। मनुष्य महाबली कैसे बना सचमुच मनोरंजन तथा जानकारी का ख़ज़ाना है। जून, 95 के अंक में छपी छींक और थप्प रोटी थप्प दाल जैसे नाटक बेजोड़ थे। आपने मुझे अपनी पत्रिका में स्थान देकर बहुत कृपा की है। अब तो मैं चकमक का भक्त हो गया हूँ। मैं एक सुझाव देना चाहता हूँ कि आप हर अंक में फरवरी 95 की तरह कोई चित्र दें। जिस पर पाठक अपनी कविता, कहानी लिखें। इससे एक ओर बच्चों के अन्दर छुपी प्रतिभा तो उभरेगी ही, साथ में हमारी प्यारी पत्रिका भी लोकप्रिय हो जाएगी।

❑ रवि कुमार पाण्डेय, खड्डा,
रीवा, म.प्र.

आपका मासिक चकमक निःसंदेह बालविज्ञान की एक बहुत ही सफल पत्रिका है। इस पत्रिका का मैंने भी अध्ययन किया है। ज्ञानोपयोगी होने के साथ बालकों में वैज्ञानिक अभिरुचि पैदा करने में यह पत्रिका सफल रही है। सद्प्रयास के लिए आपको बहुत-बहुत धन्यवाद!

❑ जे.एस. यादव, इलाहाबाद उ.प्र.

सम्पादक चकमक,

मैंने शराब बन्द कराने के लिए एक लेख लिखा है। मैं लोगों को समझाना चाहती हूँ कि शराब एक ज़हर है। मेरा सोचना है चकमक साथ दे मेरा। बाकी चकमक की मर्ज़ी।

❑ टीना मिश्रा, दस वर्ष, भोपाल

(टीना का लेख हम ज्यों का त्यों यहाँ छाप रहे हैं। स.)

शराब

शराब एक ज़हर है। वह मनुष्य को सड़ा देगी। इस शराब से ग़रीबों को बहुत नुकसान है। ग़रीब लोग सस्ती शराब पीते हैं। कई बार शराब में मिलावट रहती है। इससे कई ग़रीबों की मौत हो जाती है और इससे ही देश कमज़ोर हो गया है। अगर इसे नहीं रोका गया तो देश और कमज़ोर हो जाएगा। मैं नहीं चाहती ऐसा हो। इसलिए क्यों न हम दूसरों का दर्द मिटा दें। बड़े बहरे हैं, इसलिए हम बच्चे मिलकर देश को सुधारें। हम सब एक संगठन भी बनाएँगे। सरकार के पास बंगला है, गाड़ी है। सरकार को देश की क्या चिन्ता। जो मेरे साथ हैं वो मुझे पत्र लिखें। अगर बड़ा भी पत्र लिखना चाहे तो लिखे। पत्र में उम्र, पता, नाम ज़रूर लिखना। किसी से डरना नहीं, जो डर गया, वो मर गया।

❑ टीना मिश्रा, एन-2/11 हबीबगंज, बंगाली कालोनी भोपाल- 462024.



साइकिल

साइकिल मुझको है प्यारा,
दूर जाने का है चारा।
साइकिल के होते हैं कई रंग,
जाना है मुझको साइकिल के संग।
इसके होते हैं दो चक्के,
वही चलाए जिसके इरादे हों पक्के।
अगर चलानी हो साइकिल,
तो ज़ोर से मारो पैडिल।
साइकिल मुझको है प्यारी,
इसकी चाल है न्यारी।
साइकिल जब चलाऊँगा,
मन चाही जगह मैं जाऊँगा।
छोटे भैया को बैठाकर,
फिर गाँव की सैर कराऊँगा।

● कुलदीप यदु, नौवीं, बड़े राजपुर, बस्तर, म.प्र.



● हरिमन चौरे, सिलपटी, शाहपुर, बैतूल, म.प्र.

पिकनिक

एक दिन मैं और मेरे दोस्त शशि, नरेश , विमल और शैलू पिकनिक मनाने जंगल गए। सर्दी के दिन थे। हम घर से सुबह आठ बजे जंगल निकल गए थे। करीब दस-ग्यारह बजे हम जंगल पहुँच गए। एक बरगद के वृक्ष के नीचे हमने अपना सामान रख दिया और पानी की तलाश करने लगे। हम थोड़ी दूर ही गए थे कि हमें एक कुआँ नज़र आया। हम अपना सामान लेने बरगद के वृक्ष के पास पहुँचे। वहाँ हमारा सामान नहीं था। वृक्ष के ऊपर कुछ बन्दर बैठे थे। उनके हाथों में हमारा सामान था। हमने अपना सामान बन्दरों से लेने के लिए बहुत प्रयास किया लेकिन हम असफल रहे। हमें बन्दरों पर बहुत गुस्सा आया। हम पाँचों कुएँ पर गए और पानी पीकर घर लौट आए।

मैंने घर आकर मेरे पापा को पिकनिक का क़िस्सा सुनाया तो वे बहुत हँसे।

● गिरीश शर्मा, जामगढ़, बरेली

माँ

हम लोग दो बहनें हैं मेरा नाम सपना तथा दूसरी बहन का नाम संगीता है। मेरी बहन छठवीं में पढ़ती है। हम दोनों बहनों का झगड़ा छोटी-छोटी-सी बातों पर हो जाता है। हमारी मम्मी को बहुत जल्दी गुस्सा आ जाता है। लेकिन हमारी मम्मी पापा जी के सामने कभी भी गुस्सा नहीं होतीं। जब पापा ऑफ़िस चले जाते हैं तो मम्मी अकेले में हम पर गुस्सा होती हैं।

एक दिन मैं और मेरी बहन संगीता सुबह नौ बजे स्कूल का गृहकार्य कर रहे थे। मेरे पास लाल वाला पेन नहीं था तो मैंने अपनी छोटी बहन संगीता से माँगा। उसने कहा हम पेन नहीं देंगे, तो मैंने उसे एक चाँटा मार दिया। वह ज़ोर-से रोने लगी। उसी समय मम्मी जी आ गईं। उन्होंने हमसे कुछ नहीं पूछा और दो-तीन चाँटे मार दिए। मैं रोने लगी और जाकर कमरे में बैठ गई। थोड़ी देर बाद मैं नहा-धोकर सीधी स्कूल चली गई। खाना भी नहीं खाया।

जब हमारी मम्मी जी को पता चला कि मेरी बिटिया खाना नहीं खा गई तो मेरा एक छोटा भाई है, वह हमारे लिए मम्मी जी के कहने पर लिवाने आया। मैंने मना कर दिया। जब हमारा छोटा भाई घर पहुँचा तो उसने मम्मी जी को बताया कि दीदी जी नहीं आ रही हैं। तो मम्मी को बहुत दुख हुआ और जब तक मैं नहीं आई तब तक वे दरवाज़े पर मेरा इन्तज़ार करती रहीं।

और जब मैं शाम को चार बजे घर आई तो मेरी मम्मी दरवाज़े पर खड़ी मेरा इन्तज़ार कर रही थीं। और उन्होंने भी खाना नहीं खाया था।

जब मैं घर पहुँची तो मेरी मम्मी ने मुझे हृदय से लगा लिया और कहा कि बेटी कोई भी माँ अपने बच्चों को ऊपर से मारती है, लेकिन उसके हृदय में ममता होती है।

● रचना ठाकुर, छठवीं, शाहगढ़, सागर, म.प्र.



● भारती वर्मा, छठवीं, छामन, बदनावर, धार, म.प्र.



पेपर वाला

पेपर वाला पेपर वाला
घरों घरों में दौड़ लगाता।
सुबह सभी से पहले उठकर
ताज़ी-ताज़ी ख़बरें लाता।
गर्मी की गर्मी सहता है
जाड़े की ठण्डक सहता है
खुद चाहे बारिश में भीगे
पर पेपर सूखा पहुँचाता।

होली दिवाली को भी वह
नहीं चैन से खुशी मनाता।
पेपर जब भी लेट पहुँचता
हर कोई फटकार लगाता।
हम सबकी सुविधा की ख़ातिर
हॉकर क्या-क्या कष्ट उठाता।
फिर भी नियत समय पर देखो
बेचारा भुगतान न पाता।

● नीलेश कुमार नेमा, भोपाल, म.प्र.

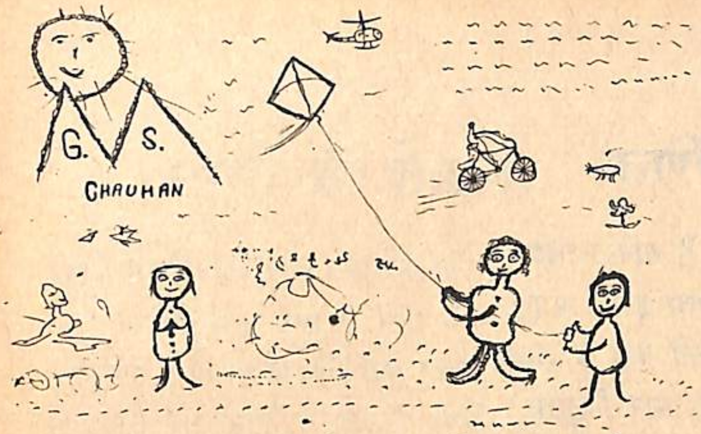
नानी का परिवार



● जानकी विश्वकर्मा, आठवीं, पचमढ़ी, होशंगाबाद, म.प्र.

मेरी नानी का घर एक गाँव में है। वहाँ नर्मदा नदी बहती है। उनके यहाँ गाय, बैल और गाय के बच्चे भी हैं। कुत्ता और छोटे-छोटे पिल्ले भी हैं। वे मुझे बहुत अच्छे लगते हैं। वहाँ पर एक मिट्ठू भी है जो बहुत अच्छा बोलता है। नानी गाय का ताज़ा दूध पीने के लिए देती हैं। बछड़ा भी दूध पीता है। हम लोग वहाँ रोज़ नर्मदा नहाने जाते हैं। और तैरते भी हैं। सब बच्चे मिलकर ख़ूब खेलते हैं। मुझे अपनी नानी का परिवार बहुत अच्छा लगता है।

● श्वेता श्रीवास्तव, पाँचवी, बालाघाट, म.प्र.



● गोविन्द सिंह चौहान, ग्यारहवीं, रामपुरा, मन्दसौर, म.प्र.



● टीकेश्वर प्रसाद साहु, गिधपुरी, रायपुर, म.प्र.



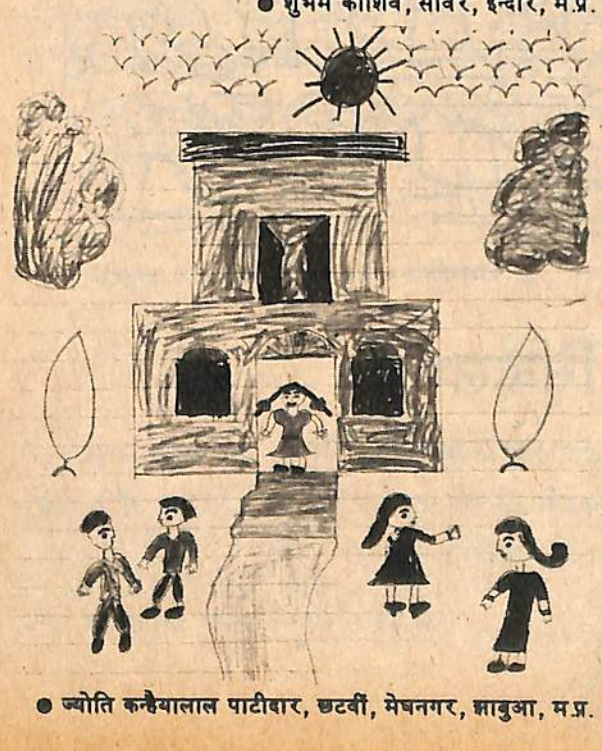
● शुभम काशिव, साँवेर, इन्दौर, म.प्र.



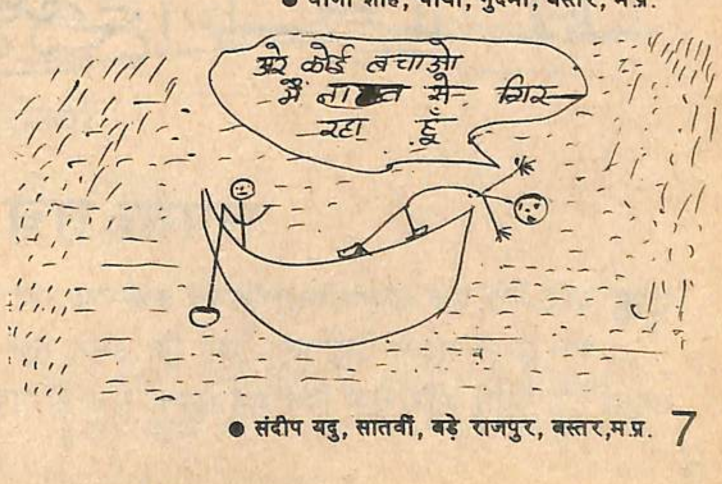
● राजीव सिंग, सातवीं



● वीणा शाह, चौथी, गुदमा, बस्तर, म.प्र.



● ज्योति कन्हैयालाल पाटीदार, छटवीं, मेघनगर, झाबुआ, म.प्र.



● संदीप यदु, सातवीं, बड़े राजपुर, बस्तर, म.प्र.

गणित

सबसे कठिन है गणित विषय
मुझको लगता इससे भय
समझ में मुझको नहीं है आता
मुर्गा बनाता मार पिटाता
भिन्न दशमलव ब्याज मिश्रधन
ना लगता पढ़ने में मन
फिर भी इससे लड़ना होगा
गणित तो मुझको पढ़ना होगा।

● योगेश सोनी, चौथी, महिदपुर, उज्जैन, म.प्र.



● रामभजन कचेर, चौथी, करकटी, शहडोल, म.प्र.

सपना सच निकला

एक बार मैंने एक सपना देखा कि मैं कहीं जा रहा हूँ। रास्ते में एक बूढ़ा मिला। वह बहुत अमीर था। उसने मुझमें ऐसा क्या देखा कि उसने मुझे अपनी दौलत का वारिस बना लिया। और सबेरे सपना टूट गया। और एक दिन यह सपना सच हो गया। यह कहानी झूठ है।

● वरुण कुमार, छठवीं, इलाहाबाद, उ.प्र.



मम्मी की शैतानी

मेरी मम्मी जब मेरी उम्र की थीं तो वो अपने आस-पास के घरों में सबसे बदमाश मानी जाती थीं। एक दिन जब वे स्कूल से वापस घर आईं तो उन्होंने अपने घर के दरवाज़े के सामने एक बकरी बैठी देखी। बस फिर क्या था, सूझी मम्मी को बदमाशी। उन्होंने बकरी के ऊपर से छलाँग मारने की कोशिश की। लेकिन हुआ यूँ कि मम्मी ने जैसे ही छलाँग मारी बकरी डर के मारे उठ गई और मम्मी गिरी अपने दरवाज़े के पास। उसमें उन्हें चोट लग गई और वे अस्पताल में पहुँच गईं।

वहाँ पर उन्हें देखने के लिए मेरे नाना और मेरे मामा आए। काफ़ी देर तक उन्होंने मम्मी को समझाया। फिर मज़ाक-मज़ाक में मम्मी और मामा से एक प्रश्न का हल करने को कहा और जीतने वाले को दस रुपए देने का वादा किया।



● मोनालीसा नाकराजी, सात वर्ष, जंगर , अमरेली, गुजरात

उनका प्रश्न था कि अगर सफ़ेद गाय सफ़ेद दूध देती है तो काली गाय कैसा दूध देगी? मम्मी ने तुरन्त कहा कि काली गाय काला दूध ही देगी। मामा जी काफ़ी देर तक सोचते रहे और फिर बड़े भोलेपन से कहा कि पापा हमने काली गाय को भी सफ़ेद दूध देते हुए देखा है। फिर तो नाना जी के हँसने का ठिकाना नहीं रहा। और आज भी जब मम्मी को चिढ़ाना होता है तो यह क़िस्सा दोहरा दिया जाता है।

● शाश्वत राय, छठवीं, बीकानेर, राजस्थान

पहेलियाँ

हरी धोती लाल दुशाला
बिच्छु सा डंक निकाला।

● जितेन्द्र और अनीता नागर, अजमेर, राजस्थान

काली उसकी वरदी, धीमी उसकी चाल
हर घर में ऐसे फिरे, जैसे हो कोतवाल।

बटन दबाते चल पड़ता है, सुस्ती नहीं दिखाता है,
इतनी सारी हवा न जाने चुरा कहाँ से लाता है।

● दीपक कुमार अग्रवाल, आठवीं, नौसर, टिमरनी, होशंगाबाद, म.प्र.

चालता



हमेशा हरा रहने वाला चालता का पेड़ भारत का ही मूल निवासी है। आमतौर पर यह हिमालय पर्वत के कुमाऊँ और गढ़वाल में और असम, बंगाल, मध्य और दक्षिणी भारत में मिलता है। भारत के अलावा यह पेड़ चीन, जावा, नेपाल आदि पड़ोसी देशों में भी मिलता है।

इस पेड़ की ऊँचाई 30 फीट से 80 फीट तक की होती है। पेड़ का ऊपरी पत्तों और शाखाओं वाला हिस्सा गोल छत्र जैसा दिखता है। यह सुन्दर छायादार पेड़ है। इसके पत्ते अण्डाकार होते हैं। लम्बाई 8 से 14 इंच और चौड़ाई 2 से 4 इंच के लगभग होता है। पत्ते के किनारे नुकीले, उभरे हुए दाँतेदार होते हैं। पत्तियों की ऊपरी सतह पर रोंए होते हैं।

चालता के पेड़ में फूल बड़े, सफ़ेद होते हैं। एक-एक फूल अलग लगता है और ये सुगंधित होते हैं। जुलाई में यह फूल खिलना शुरू होते हैं। इसका फल बड़ा, गोल और कड़ा होता है। फल पर पाँच पंखुड़ियाँ जैसी एक के ऊपर एक चिपकी होती हैं। इसमें छोटे-छोटे बीज होते हैं। ये बीज फल के लिसलिसे गूदे में रहते हैं।

इस पेड़ की छाल नरम-सी, लाल रंग की होती है। इसकी लकड़ी का रंग हल्का लाल-भूरा सा होता है। यह लकड़ी भारी और कठोर होती है। चालता का पेड़ बीज से लगाया जाता है। इसके अंकुरण के लिए सबसे अच्छा समय मानसून का होता है। जंगलों में चालता के पेड़ के बीज बिखेरने में हाथी ख़ासतौर पर मदद करता है। होता यूँ है कि हाथी इसके फल खा लेता है फिर उसके मल से बीज निकलकर जंगल में फैलते जाते हैं। और समय आने पर उनका अंकुरण होता है।

इस पेड़ की लकड़ी से पटरे बनाए जाते हैं जिनको कई तरह से काम में लाया जाता है। इसकी लकड़ी बन्दूक का लकड़ी वाला हिस्सा, औज़ारों के हैंडिल आदि बनाने में भी इस्तेमाल होती है। इसकी लकड़ी के बचाव के उपाय करने के बाद इससे रेल के स्लीपर भी बनाए जाते हैं। इसका फल खाया जाता है। इसके फल से ठण्डा पेय, जैम आदि भी बनाए जाते हैं। फल से टॉनिक और दूसरी दवाएँ भी बनाई जाती हैं। इसकी हरी पत्तियों का टसर के धागे बनाने वाले कीड़ों को पालने के लिए उपयोग होता है। ● ● ●



खेलेंगे ता-ता थैया

पाँच बरस का हूँ मैं, मम्मी
मुन्ना है दो साल का।
पर गुमान है उसको, अपने
रूई जैसे गाल का।

नहीं तनिक भी करने देता
है मुझको वह प्यार कभी।
कभी नोचता बाल हमारे,
रो पड़ता मुँह फाड़ कभी।

ज़रा उसे समझा दो ना
मम्मी, मैं हूँ उसका भैया।
लेकर साथ उसे भी तब
हम खेलेंगे ता-ता थैया।

वरना कुट्टी आज से

मुन्ने ने चुपके से कर दी
कल जो गीली खाट।
हँसकर बोली मम्मी –
यहीं बना है गंगा-घाट।

मुन्ना करे बुरा या अच्छा
मम्मी हँसती रहती।
'ऐसे नहीं, करो ऐसे' –
केवल मुझको ही कहती।

आज सोचता हूँ कह दूँगा
दुखी-दुखी आवाज़ से –
'प्यार करो मुझको भी मम्मी,
वरना कुट्टी आज से।'

● अभिरंजन कुमार

चित्र ● गिरिजा वायंगणकर



संचार : धुएँ से टेलीफ़ोन तक

❑ राजेश उत्साही

अपनी बात, सन्देश आदि किसी और तक पहुँचाने के आजकल कितने सारे तरीक़े उपलब्ध हैं। एक से बढ़कर एक।

आज हम कोसों दूर बैठे अपने किसी परिचित, परिजन से पलक झपकते ही सम्पर्क कर सकते हैं। ज़रूरत होती है एक 'अदने' से टेलीफ़ोन की। लेकिन 'अदने' से इस टेलीफ़ोन तक पहुँचने की कहानी बहुत लम्बी है। इतनी लम्बी कि टेलीफ़ोन भी अब पुराने ज़माने की चीज़ लगने लगा है। बहरहाल इस बार हम टेलीफ़ोन की आगे-पीछे की कहानी में गोता लगाने चलेंगे। पर पहले थोड़ी चर्चा उन तरीक़ों की भी करते चलें, जिन्हें कभी न कभी अपनी बात कहने, सन्देश पंहुँचाने के लिए इस्तेमाल किया जाता रहा होगा। इनमें से कुछ तो ऐसे हैं जिनका उपयोग आज भी किया जा रहा है।

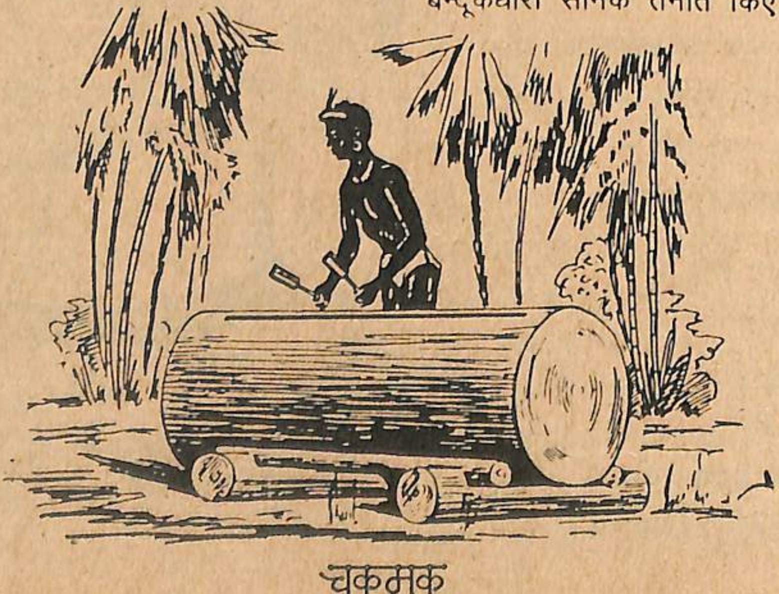
कल्पना करो कि तुम किसी जंगल या वीराने में भटक गए हो। दूर-दूर तक तुम्हारी आवाज़ सुनने वाला कोई नहीं है। अपने वहाँ होने की सूचना कैसे पहुँचाओगे?

एक ज़माना था जब धुएँ या नगाड़ों, ढोलों की आवाज़ से सन्देश एक जगह से दूसरी जगह पहुँचाए जाते थे। आज भी दुनिया के बहुत से हिस्सों में आदिवासी अपने सन्देश पहुँचाने के लिए इन तरीक़ों का इस्तेमाल करते हैं। लेकिन ये तरीक़े भी कुछ ख़ास सन्देशों के लिए, जो पहले से तय होते हैं, इस्तेमाल किए जा सकते हैं। जैसे किसी ख़तरे की सूचना के लिए या फिर लोगों को इकट्ठा करने के लिए।

भारत, अफ़्रीका, मध्य अमेरिका और पोलीनेशिया की आदिवासी जातियों के बीच ध्वनि संकेतों द्वारा ख़बर भेजने का तरीक़ा आज भी प्रचलित है।

इटली और अबिसिनिया के बीच हुए पहले युद्ध के समय इटली की सेना की गतिविधियों की ख़बर शासक मेनलीक को इतनी जल्दी लग जाती थी कि इटली की सेना के अधिकारी अचम्भित थे। वास्तव में यह ख़बर नगाड़ों से भेजे जाने वाले संकेत से ही जाती थी!

एक अन्य तरीक़े में बन्दूक दागकर सन्देश पहुँचाया जाता था। कहते हैं कि रूस के ज़ार पावेल (प्रथम) के राजतिलक के समारोह शुरू होने की सूचना के लिए मास्को से पीटर्सबर्ग (आज का नाम लेनिनग्राद) तक दो-दो सौ मीटर की दूरी पर बन्दूकधारी सैनिक तैनात किए गए थे। मास्को में



समारोह होने पर बजी गिरजे की पहली घण्टी की आवाज़ के साथ ही सबसे निकट के सैनिक ने हवा में गोली चलाई। इस गोली की आवाज़ सुनकर अगले सैनिक ने, फिर अगले ने...। और इस तरह मास्को में बजी पहली घण्टी के ठीक तीन घण्टे बाद 650 किलोमीटर दूर पीटर्सबर्ग में राजतिलक की खुशियाँ मनाने के लिए तोप दगने की आवाज़ सुनाई दी।

प्रकाश भी एक ऐसा ही माध्यम रहा है जिससे सन्देश भेजे जाते थे।

लेकिन ये तरीक़े भी पहले से तय सन्देशों को भेजने के काम ही आते थे। ऐसे कई तरीक़ों का उपयोग हम आज भी करते हैं। अपने आसपास नज़र दौड़ाओ।

किसी छोटे से कस्बे या गाँव में स्कूल की घण्टी पूरे गाँव में सुनाई देती है, जो बताती है कि स्कूल लग चुका है या छुट्टी हो गई है। रेल्वे स्टेशन पर टन टन....की लम्बी घण्टी किसी गाड़ी के आने की सूचना देती है। मन्दिर और गिरजाघरों की घण्टियाँ आरती या प्रार्थना शुरू होने की ख़बर देती है, तो मस्जिदों की अज़ान नमाज़ का वक़्त होने की। आज भी छोटे कस्बों के सिनेमाघरों में शो शुरू होने और छूटने की सूचना देने के लिए सिनेमाघर के बाहर लाउडस्पीकर पर गीत बजाए जाते हैं।

महानगरों में बड़ी मिलों के सायरन काम पर जाने वाले मज़दूरों, कर्मचारियों के लिए चिंघाड़ते हैं। तो दूसरी तरफ आग लगने पर फायर ब्रिगेड की गाड़ियाँ अपनी तीव्रगति के साथ घण्टियाँ घनघनाती हुई सड़क पर दौड़ती हैं।

दरवाज़े पर साँकल या कुण्डी की खड़खड़ाहट या आसमान में बादलों की गड़गड़ाहट ये सब हमारे लिए पहले से तय सन्देशों के संकेत ही तो हैं।

यह तो हुई बात बिना कुछ कहे अपना सन्देश पहुँचाने की। लेकिन हम इस बात पर ग़ौर करें कि वास्तव में सन्देश पहुँचाने के और क्या तरीक़े हो सकते हैं, तो उन्हें दो भागों में बाँटा जा सकता है। पहला संकेत या ध्वनि के माध्यम से और दूसरा लिखित माध्यम।

तुमने राजा-महाराजाओं की कहानियों में पढ़ा होगा कि उनके अपने ख़ास सन्देश वाहक होते थे, जो या तो मुँह जुबानी सन्देश लेकर एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाते थे या फिर लिखित सन्देश लेकर। बोलचाल की भाषा में इन्हें 'हरकारा' कहा जाता था। हरकारे आज भी होते हैं। हम उन्हें हरकारा भले ही नहीं कहें, पर वे काम वैसा ही करते हैं। जैसे दूर गाँव से शहर आने वाला व्यक्ति या दूर शहर से गाँव जाने वाला व्यक्ति, अपने साथ अपने पास-पड़ोस के लोगों के तमाम सन्देश (हालचाल, ख़बर, दुआ-सलाम) लेकर आता है। पुराने ज़माने के 'हरकारे' तेज़ धावक या फिर तेज़ घुड़सवार हुआ करते थे।

पिछले सालों की एक हिट हिन्दी फ़िल्म का गीत 'कबूतर...जा...जा...' बच्चे-बच्चे की ज़ुबान पर था। इस गीत में एक कबूतर नायिका का पत्र लेकर नायक तक जाता है। यह तो आख़िर एक फ़िल्म की कहानी का हिस्सा था। लेकिन एक ज़माना था, जब कबूतर सचमुच पत्र लाने-ले-जाने का काम करते थे। कबूतरों की इस ख़ासयित का ज़िक्र हम इसी अंक में अलग से कर रहे हैं।

लिखित माध्यम से सन्देश भेजने की कहानी पत्र से लेकर अब फ़ैक्स (जिसमें अपने हाथ का लिखा हुआ कोई भी सन्देश, वैसा का वैसा ही, सम्बंधित व्यक्ति तक मिनटों में पहुँच जाता है) या उससे भी आगे इलेक्ट्रॉनिक मेल तक आ पहुँची है, जो एक अलग ही अध्याय है। इस अध्याय की चर्चा फिर कभी। फ़िलहाल हम वापस लौटते हैं संकेत या ध्वनि माध्यम से सन्देश भेजने की दुनिया में।

धुएँ या नगाड़े की आवाज़ से आगे बढ़कर लोगों ने नए-तरीक़े ईजाद करने की कोशिश की। हम यहाँ इन कोशिशों की संक्षिप्त चर्चा विकास के क्रम में कर रहे हैं।

आकृतियों से अक्षर

सन् 1684 में डॉ. रॉबर्ट हुक नामक एक अंग्रेज़ वैज्ञानिक ने सुझाव दिया कि यदि एक ऊँची पहाड़ी पर कुछ आकृतियाँ (जो अक्षरों की प्रतीक होंगी) फ्रेम में जड़कर लटका दी जाएँ, तो दूर की किसी पहाड़ी से इन्हें देखा जा सकता है और इनसे

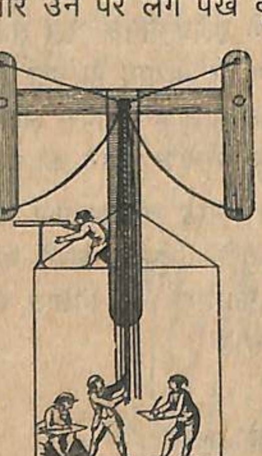
सन्देश दिया जा सकता है। रॉबर्ट महाशय यह अजीबो-ग़रीब सुझाव देते समय शायद इस बात को भूल गए कि इसके लिए उन्हें कितनी बड़ी-बड़ी आकृतियाँ बनानी होंगी? हुक लन्दन में इसे आज़माकर देखना चाहता था, पर व्यवहारिक रूप में वह इसे नहीं कर पाया।

विद्युत के उपयोग का सुझाव

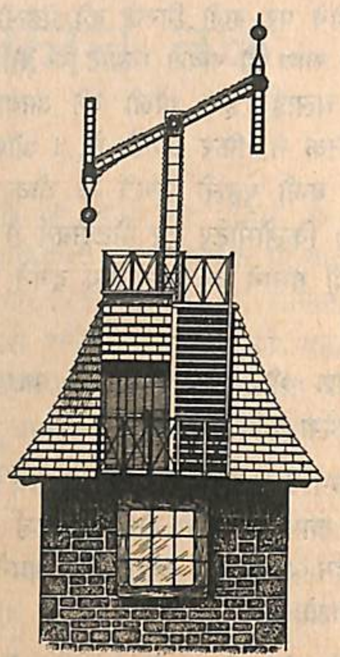
सन् 1753 तक आते-आते लोग बिजली के बारे में जानने लगे थे। स्कॉटलैण्ड के एक डॉक्टर चार्ल्स मेरीसन ने सुझाव दिया कि सन्देश भेजने के लिए बिजली का उपयोग किया जाए। उसने कहा कि अंग्रेज़ी के 26 अक्षरों के लिए 26 अलग-अलग तारों का उपयोग किया जाए। प्रत्येक अक्षर के लिए एक तार। तार में जब विद्युत प्रवाहित होगी तो दूसरे सिरे में लगी एक गेंद काग़ज़ के टुकड़े पर उस अक्षर को बताएगी।

पहला सफल समाचार संकेतक

सन् 1794 में फ्रांस के एक मिस्त्री क्लॉडशेज ने समाचार भेजने का एक नया तरीक़ा निकाला। लगभग 8-8 किलोमीटर की दूरी पर ऊँचे-ऊँचे खम्भे लगाए गए। इन खम्भों पर घूमने वाले पंखे लगे थे। इन पंखों का अलग-अलग तरह से घूमना, शब्दों तथा शब्दों के समूह को, वाक्यों को बताता था। ये खम्भे और उन पर लगे पंखे दूर से दिखाई



मिस्त्री क्लॉडशेज़ का लकड़ी का बना समाचार संकेतक। ऊपर एक व्यक्ति दूरबीन की मदद से दूसरे खम्भे पर लगे संकेतक को देख रहा है। नीचे दो व्यक्ति संकेत लिख रहे हैं। एक अन्य व्यक्ति समाचार को आगे बढ़ाने के लिए संकेतक की भुजाओं को खींच रहा है।



क्लॉडशेज़ के संकेतक का सुधरा रूप।

देते थे। प्रत्येक खम्भे पर एक या अधिक कर्मचारी होते थे, जो टेलीस्कोप की मदद से देखकर, संकेत को समझकर, अपने खम्भे के पंखे को घुमाकर, संकेत को आगे बढ़ाते थे। पंखों को एक सौ नब्बे से भी अधिक तरीक़ों से घुमाया जा सकता था।

संकेत खम्भों की पहली ऐसी लाइन पेरिस और लिली के बीच लगाई गई थी। यह लगभग 230 किलोमीटर लम्बी थी। तुम्हें यह जानकर ताज्जुब होगा कि इसके ज़रिए केवल दो मिनट में एक खम्भे से दूसरे खम्भे पर सन्देश भेजा जा सकता था। इसका उपयोग फ्रांस के क्रान्तिकारियों ने बख़ूबी किया था।

पहला विद्युत टेलीग्राफ़

टेलीग्राफ़ शब्द ग्रीक भाषा का है। इसका अर्थ है 'दूर से लिखना'। सन् 1804 में ऑस्ट्रिया के एक वैज्ञानिक फ्रांसिसको साल्वा ने चार्ल्स मेरीसन के सुझाव को ध्यान में रखकर पहला विद्युत टेलीग्राफ़ बनाया। उसने हर अक्षर के लिए एक अलग तार लिया। इन तारों के एक सिरे को पानी से भरे एक बरतन में रखा गया। जब किसी तार से बिजली प्रवाहित की जाती तो उसके दूसरे छोर पर एक छोटा-सा बुलबुला बन जाता, जो किसी एक अक्षर

का प्रतीक होता। यह बुलबुला पानी और तार में से प्रवाहित हो रही बिजली के बीच होने वाली रासायनिक क्रिया से बनता था।

इस आविष्कार ने सनसनी तो फैलाई लेकिन यह कारगर नहीं हुआ। लेकिन 1812 में इसमें थोड़ा सुधार करके डॉ. सेम्युल वान सोमरिंग ने 3 किलोमीटर लम्बे तार से अपना सन्देश सफलतापूर्वक भेजा।

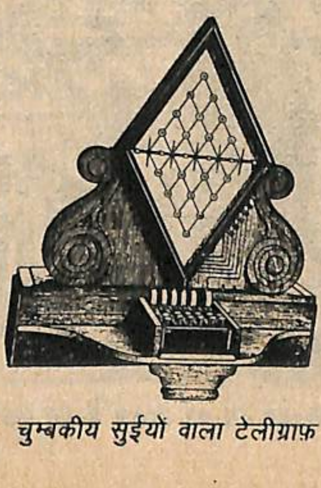
छह तारों से पूरा सन्देश

रूस के एक राजनीतिज्ञ बैरन पॉवेल शिलिंग ने 26 की जगह केवल छह तारों का इस्तेमाल करके एक विद्युत चुम्बकीय टेलीग्राफ़ बनाया।

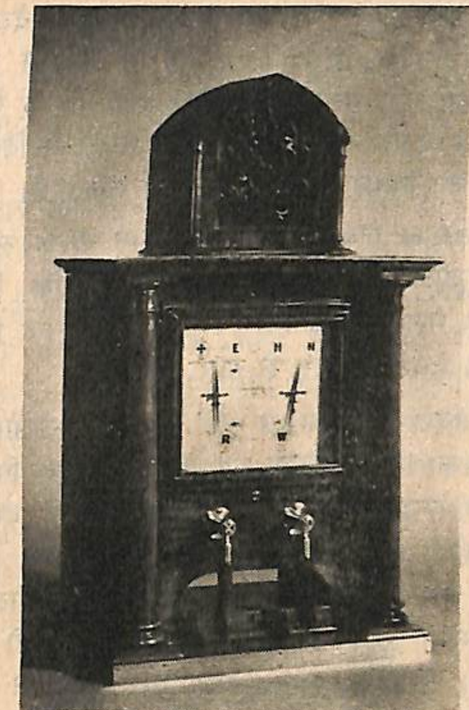
किसी तार में से जब विद्युत प्रवाहित की जाती तो वह दूसरे छोर पर लगी चुम्बकीय सुई को घुमा देती थी। सुई एक कार्ड के ऊपर बने सफ़ेद और काले खानों पर घूमती थी। शिलिंग ने एक संकेत भाषा भी बनाई थी। इसमें काला-सफ़ेद खाना एक अक्षर बताता था और काला-काला-सफ़ेद दूसरा अक्षर। इन संकेतों से पूरा वाक्य पढ़ा जा सकता था।

डायल पर घूमने वाली सुइयाँ

सन् 1837 में एक अंग्रेज़ प्रोफ़ेसर चार्ल्स व्हीटस्टोन तथा उसके एक अन्य साथी विलियम फॉदरगिल कुक ने बैरन के टेलीग्राफ़ यंत्र में थोड़ा परिवर्तन किया। उन्होंने पाँच विद्युत तारों को पाँच चुम्बकीय सुइयों से जोड़ा जो विद्युत प्रवाहित होने पर एक रेखाचित्र पर घूमती थीं। इन सुइयों में से



पाँच चुम्बकीय सुईयों वाला टेलीग्राफ़ यंत्र।



व्हीटस्टोन का दो चुम्बकीय सुईयों वाला टेलीग्राफ़ यंत्र!

जब भी कोई दो सुइयाँ घूमतीं तो वे किसी एक ख़ास अक्षर को बताती थीं। सुइयों को घुमाकर संदेश भेजा भी जा सकता था, जिसे ऐसे ही दूसरे यंत्र पर प्राप्त किया जाता था। बाद में इस यंत्र में और सुधार किया गया जिसमें सुइयों की संख्या केवल दो ही थी।

पर यह यंत्र बहुत धीरे-धीरे काम करता था। लेकिन फिर भी इसका इस्तेमाल वर्षों तक रेल के संचालन में किया जाता रहा। व्हीटस्टोन ने इसे अपने नाम से ब्रिटेन में पेन्टेट कराया। यानी इसका इस्तेमाल बिना व्हीटस्टोन से पूछे कोई नहीं कर सकता था।

टेलीग्राफ़ : जो सचमुच चल निकला

सन् 1837 में ही अमरीका के सेम्युल फिनले मोर्स ने केवल एक तार वाले टेलीग्राफ़ का आविष्कार किया। उसने इसे अपने नाम से अमरीका में पेटेन्ट भी कराया।

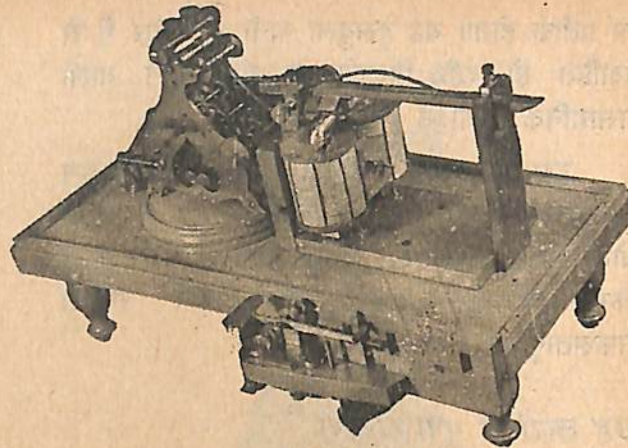
सेम्युल मूलतः एक चित्रकार था। लेकिन विज्ञान में उसकी रुचि बचपन से ही थी। एक बार वह प्रसिद्ध कलाकृतियों को देखने के लिए यूरोप के दौरे पर निकला। जहाज़ में यात्रा के दौरान

उसने एक यात्री के पास विद्युत चुम्बक देखा। चुम्बक देखकर मोर्स के दिमाग़ में विचारों का सिलसिला चल पड़ा। मोर्स सोच रहा था कि एक स्थान से दूसरे स्थान तक सन्देश भेजने में विद्युत चुम्बक का बेहतर इस्तेमाल कैसे हो सकता है।

सेम्युल जब अपनी यात्रा ख़त्म करके लौटा तो न्यूयॉर्क विश्वविद्यालय में उसके एक मित्र डॉक्टर गेल उसे अपने एक अन्य वैज्ञानिक मित्र जोजेफ हेनरी के पास ले गए।

हेनरी ने 1832 में ख़ुद एक टेलीग्राफ़ लाइन का निर्माण किया था। यह लाइन एक विद्युत चुम्बक बनाती थी। इस विद्युत चुम्बक में दोलन गति होती थी और चुम्बक एक घण्टी पर चोट करता था। बार-बार घण्टी पर पड़ने वाली चोट से ही सन्देश लिया या भेजा जाता था। घण्टी की आवाज़ से सन्देश समझने के लिए हेनरी ने एक संकेत भाषा भी बनाई थी।

मोर्स ने इसमें सुधार करने का निश्चय किया। हेनरी का तरीक़ा केवल पाँच किलोमीटर की दूरी तक काम करता था। मोर्स चाहता था कि टेलीग्राफ़ से सैंकड़ों किलोमीटर दूर तक सन्देश भेजा जा सके। हेनरी की मदद से उसने लाइन में जगह-जगह 'रिले' नामक व्यवस्था की। इस 'रिले' में तार की एक कुण्डली थी, जिसमें बैटरी लगी होती थी। हेनरी की लाइन में सन्देश कुछ दूर जाने पर धीमे पड़ जाते थे। लेकिन 'रिले' की व्यवस्था होने से सन्देशों को धीमा पड़ने पर तेज़ कर दिया जाता था।



सेम्युल मोर्स की एक तार वाली पहली टेलीग्राफ मशीन जिसे उसने सन् 1838 में अपने नाम से पेटेन्ट कराया। इसमें सन्देश भेजने और लेने की सुविधा थी।

मोर्स को हेनरी की संकेत भाषा भी जँची नहीं। मोर्स ने एक नई संकेत भाषा का आविष्कार किया। इसे ही आज 'मोर्स कोड' कहा जाता है। थल सेना और नौ सेना में इसका उपयोग आज भी किया जाता है। इस संकेत भाषा में मात्र एक बिन्दु (डॉट) और एक रेखा (डैश) होती है। कुछ डॉट और डैश मिलकर वर्णमाला का एक अक्षर बनाते हैं।

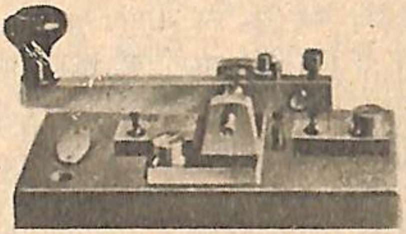
MORSE CODE

A . –		R . – .
B – . . .	J . – – –	S . . .
C – . – .	K – . –	T –
D – . .	L . – . .	U . . –
E .	M – –	V . . . –
F . . – .	N – .	W . – –
G – – .	O – – –	X – . . –
H	P . – – .	Y – . – –
I . .	Q – – . –	Z – – . .

मोर्स कोर्ड।



मोर्स टेलीग्राफ़ यंत्र पर सन्देश भेजता एक व्यक्ति।



मोर्स टेलीग्राफ़ की संकेत भेजने वाली 'की'।

इसमें एक मशीन पर उंगली से दबाई जाने वाली एक 'कुंजी' (की) से संकेत भेजे जाते हैं। जो दूसरे छोर पर ऐसी ही एक मशीन में लगे पेन से पेपर टेप पर दर्ज होते हैं। पेपर टेप पर दर्ज संकेतों को अक्षरों में बदलकर सन्देश प्राप्त किया जाता है।

मोर्स को इस टेलीग्राफ़ प्रणाली की उपयोगिता सिद्ध करने के लिए बहुत पापड़ बेलने पड़े। पाँच साल तक मोर्स घोर ग़रीबी और तंगी में जिया। आख़िरकार सरकार ने उसे इस काम के लिए आवश्यक धनराशि उपलब्ध करवाई। मोर्स ने तारों की 65 कि.मी. लम्बी लाइन वाशिंगटन से लेकर बाल्टीमोर तक बिछाई। तारों को खम्भों के सहारे लगाया गया। बिजली की सप्लाई के लिए सौ सेलों की एक बैटरी लगाई गई। 24 मई 1844 को इस लाइन से पहला सन्देश भेजा गया। परीक्षण सफल रहा। जल्द ही टेलीग्राफ़ का उपयोग विभिन्न व्यवसायों, सरकारी दफ़्तरों में किया जाने लगा।

एक समय अमेरिका में ही टेलीग्राफ़ की लगभग पच्चीस हज़ार किलोमीटर लम्बी लाइन थी। जिस पर एक हज़ार से अधिक ऑपरेटर सन्देश भेजने और लेने का काम करते थे।



मोर्स टेलीग्राफ़ की संकेत दर्ज करने वाली मशीन। प्राप्त होने वाले संकेत पेपर टेप पर लिखित या उभारों के रूप में दर्ज होते हैं।

मोर्स के टेलीग्राफ़ यंत्र में भी कई और सुधार हुए। लेकिन टेलीफ़ोन का आविष्कार होने तक टेलीग्राफ़ ने धूम मचा रखी थी।

अक्षर छापने वाली टेलीग्राफ़ मशीन

सन् 1855 में डेविड ह्यूज ने अमरीका में एक छपाई टेलीग्राफ़ मशीन का आविष्कार किया। (जिसे आज हम टेलीप्रिन्टर कहते हैं।) इसमें टेलीग्राफ़ लाइन को एक ऐसी मशीन से जोड़ा गया, जिसमें अक्षरों का एक 'की' बोर्ड था। जब किसी एक कुंजी (की) को दबाया जाता तो उस अक्षर का एक विद्युत संकेत दूसरे छोर पर लगी मशीन पर पहुँचता जहाँ वह काग़ज़ पर छप जाता।



मशीन जो टेलीफ़ोन पर आने वाले सन्देश को सुनकर पेपर पर टाइप करती है।

समय के साथ-साथ टेलीप्रिन्टर में भी काफ़ी सारे सुधार हुए। टेलीप्रिन्टर का उपयोग तारघरों और अख़बारों में बहुत होता है।

सबसे आधुनिक टेलीप्रिन्टर में एक फ़ोन भी लगा होता है। जो दूसरी मशीन पर सन्देश भेजने या दूसरी मशीन से फ़ोन पर आने वाले सन्देश को सुनकर प्रिन्टर पर टाइप करवाता है।

राबर्ट हुक के 'आकृतियों से अक्षर' के सुझाव से हम टेलीप्रिन्टर तक आ पहुँचे हैं। लेकिन दूसरी

तरफ इसके समानान्तर कुछ और लोग एक दूसरी दिशा में खोज में लगे थे।

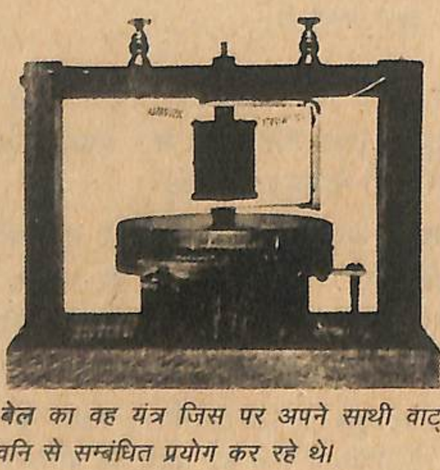
यूँ हुआ टेलीफ़ोन का आविष्कार

अमेरिका का अलेक्ज़ेंडर ग्राहम बेल गूंगे-बहरे लोगों को पढ़ाया करता था। बेल ने ध्वनियों और कान की रचना का गहरा अध्ययन किया था। वह चाहता था कि कोई ऐसा उपाय हो जिससे बहरे व्यक्ति कही हुई बात को देख सकें।

वह एक ऐसा यंत्र बनाने में जुटा था, जिसमें मुँह से बोली हुई आवाज़ की तरंगों से एक चुम्बकीय सुई कम्पित हो, और उसके कम्पन देखकर यह समझा जा सके कि क्या कहा गया है?

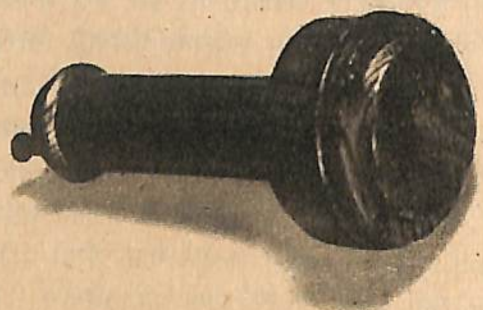
एक दिन बेल अपने साथी वाट्सन के साथ प्रयोगशाला में काम कर रहा था। दोनों अलग-अलग कमरों में बैठे थे। वे धातु की एक पत्ती के साथ प्रयोग कर रहे थे, जिसमें पत्ती को कम्पित करना था। पत्ती चिपककर रह गई। वाट्सन ने सोचा पत्ती चिपक गई है इसलिए उसमें कम्पन नहीं हो रहा है। उसने पत्ती को हाथ से छुड़ाया। इससे ध्वनि उत्पन्न हुई और वह तार के ज़रिए दूसरे कमरे में बैठे बेल को वैसी ही पत्ती पर सुनाई दी।

बेल इस आवाज़ को सुनकर आश्चर्य से भर उठा। उसने निष्कर्ष निकाला कि पत्ती में कम्पन से पैदा होने वाली विद्युत तरंग इतनी शक्तिशाली है कि तार से जुड़ी दूसरी पत्ती में भी ऐसे कम्पन पैदा कर सकती है, जिन्हें सुना जा सकता है। उसने यह भी देखा कि पत्ती में एक नहीं कई ध्वनियाँ पैदा हुई थीं। बेल यह भी जानता था कि आदमी की बोली भी भिन्न-भिन्न आकृतियों वाली ध्वनियों के संयोजन से बनी है।



ग्राहम बेल का वह यंत्र जिस पर अपने साथी वाट्सन के साथ ध्वनि से सम्बंधित प्रयोग कर रहे थे।

बेल ने एक महीने की मेहनत के बाद एक सरल टेलीफ़ोन बना डाला। यह 1876 की बात है। इस टेलीफ़ोन में एक ट्यूब के एक सिरे पर एक चपटी डिस्क लगाई गई थी। ट्यूब में बोलने पर ध्वनि तरंगें इस डिस्क को कम्पित करती थीं। ये कम्पन एक विद्युत चुम्बक में विद्युतधारा को कभी बढ़ा देते थे, या कभी घटा देते थे। घटती-बढ़ती हुई यह विद्युत धारा तार के माध्यम से एक दूसरे उपकरण में पहुँच जाती। इससे वहाँ एक दूसरी डिस्क में होने वाले कम्पन हवा में वैसी ही ध्वनि तरंगें पैदा करते, जैसे कि दूसरे सिरे पर स्थित डिस्क पर पहुँचती थीं।



ग्राहम बेल द्वारा बनाया गया पहला टेलीफ़ोन।

पहले तो बेल के इस आविष्कार पर लोगों ने ध्यान नहीं दिया। लेकिन कुछ ही समय बाद टेलीफ़ोन की चर्चा सब जगह होने लगी। बेल अपने इस टेलीफ़ोन को लेकर अमरीका और यूरोप के दौरे पर गया। वह वहाँ इसके व्यवसायिक उपयोग की सम्भावना देखना चाहता था।

टेलीफ़ोन का पहला मॉडल ऐसा था जिसमें सुनने और बोलने के लिए एक ही उपकरण था। उसे ही बारी-बारी कान या मुँह पर लगाना पड़ता था। लेकिन इसमें ख़ासी दिक़्क़त होती थी। अमेरिका के प्रसिद्ध वैज्ञानिक थॉमस अल्वा एडीसन ने बेल के इस उपकरण में रुचि दिखाई और जल्द ही एक ऐसा उपकरण बना डाला, जिसमें सुनने और बोलने



ग्राहम बेल न्यूयार्क और शिकागो के बीच टेलीफ़ोन लाइन का उद्‌घाटन करते हुए।

के लिए अलग-अलग उपकरण थे। बेल के टेलीफ़ोन से कुछ किलोमीटर दूर तक ही बात की जा सकती थी। एडीसन ने यह खामी भी दूर की।

लेकिन टेलीफ़ोन की कहानी यहाँ ही ख़त्म नहीं हो जाती। टेलीफ़ोन का अर्थ है, ऐसा उपकरण जो दूर की आवाज़ को पास लाए या दूर ले जाए।

पिछले सौ सालों में आवाज़ को दूर तक ले जाने या पास लाने के लिए बहुत सारी नई व्यवस्थाएँ करनी पड़ीं। मसलन सन्देश भेजने के लिए तारों का बिछाना, टेलीफ़ोन का सार्वजनिक उपयोग हो पाए इसके लिए एक्सचेंजों की व्यवस्था आदि आदि।

शुरू-शुरू में टेलीफ़ोन पर बात करने के लिए एक्सचेंज की मदद लेनी पड़ती थी। एक्सचेंज वह जगह होती है जहाँ से शहर भर के टेलीफ़ोन जुड़े होते हैं। टेलीफ़ोन पर किसी से बात करने के लिए पहले इस एक्सचेंज को फ़ोन करना पड़ता था। वहाँ बैठा व्यक्ति जिसे ऑपरेटर कहा जाता है, फ़ोन पर पूछता कि आपको किस से बात करनी है। जवाब मिलने पर वह चाहे गए नम्बर पर लाइन को मिला देता। फिर जल्द ही ऑटोमेटिक एक्सचेंज बना जिसमें सीधे ही मनचाहे व्यक्ति से बात की जा सकती थी।

जैसा कि हमने शुरू में कहा कि टेलीफ़ोन तक पहुँचने की कहानी इतनी लम्बी है कि वह भी अब पुराने ज़माने की चीज़ लगने लगा है। सचमुच संचार विज्ञान ने आज इतनी अधिक प्रगति कर ली है कि अब तुम चाहो तो टेलीफ़ोन पर बात करते समय सामने वाले व्यक्ति का चेहरा उसके हाव-भाव भी देख सकते हो। इतना ही नहीं इस फ़ोन को अगर घर के टेलीविज़न सेट से जोड़ दिया जाए तो बात करने वाले व्यक्ति की तस्वीर टेलीविज़न पर देखी जा सकती है।

हाल ही में भारत के कलकत्ता शहर में सेल्युलर फ़ोन की सुविधा उपलब्ध हो गई है। सेल्युलर फ़ोन वॉकी-टॉकी जैसा दिखाई देता है। इस तार विहीन फ़ोन पर कार में बैठे हुए, रास्ते चलते या फिर घर में बैठकर अपने आसपास के लगभग पचास किलोमीटर क्षेत्र में बात की जा सकती है।



टेलीफ़ोन से आगे की कहानी टेलीफ़ोन के तारों की पीठ पर से उड़कर कृत्रिम उपग्रहों के ज़रिए हम तक आती है। इस उड़ान के लिए तुम्हें एक और लेख का इन्तज़ार करना पड़ेगा। फ़िलहाल हम इसे यहीं छोड़ते हैं।

❑❑

इस लेख से सम्बंधित चित्र दी इन्वेंशंन्स दैट चेन्जड् दी वर्ल्ड (रीडर डायजेस्ट), साइन्स एण्ड इन्वेंशंन्स एन्साइक्लोपीडिया, द स्टोरी ऑफ इन्वेंशंन्स, लाइफ साइन्स लायब्रेरी सीरीज़ से साभार।

टेलीफ़ोन का विकास

0. 1876 में ग्राहम बेल ने पहला टेलीफ़ोन बनाया।

1. 1879 के एडीसन रिसीवर के नाम से मशहूर इस फ़ोन में सुनने के लिए हेंडिल में लगे बक्से का उपयोग करना होता था। इसका उपयोग केवल साल भर ही हुआ।

2. 1880 के इस फ़ोन में सामने लगे बाक्स में बोला जाता था, जबकि सुनने के लिए साथ लगे रिसीवर को कान से लगाया जाता था।

3. सन् 1880 की शुरूआत में गोवर-बेल द्वारा निर्मित इस फ़ोन में बोलने के लिए बक्से के अतिरिक्त, सुनने के लिए दो नलियाँ होती थीं। इन नलियों को कान में लगाया जाता था।

4. 1890 का एक मॉडल।

5. 1905 का कॅंडिलस्टिक फ़ोन। बोलने के लिए सामने एक स्पीकर होता था और सुनने के लिए रिसीवर। रिसीवर को स्पीकर पर लगे हुक में लटकाने पर बातचीत बन्द हो जाती थी।

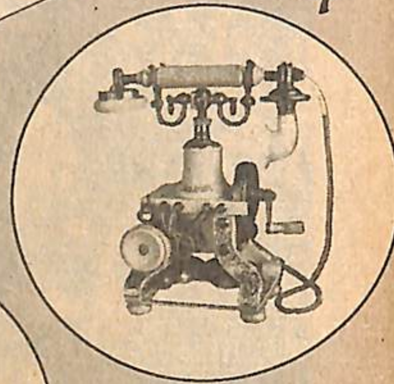
6. 1920 का डायल युक्त कॅंडिलस्टिक फ़ोन। इस समय तक ऑटोमेटिक एक्सचेंज अस्तित्व में आ गए थे। इसी वजह से फ़ोन में पहली बार डायल का इस्तेमाल किया जाना सम्भव हुआ।

7. 1930 तक आते-आते प्लास्टिक से ऐसे टेलीफ़ोन बनने लगे थे जिसमें सुनने और बोलने के लिए रिसीवर और स्पीकर एक ही नलीनुमा रचना पर होते थे।

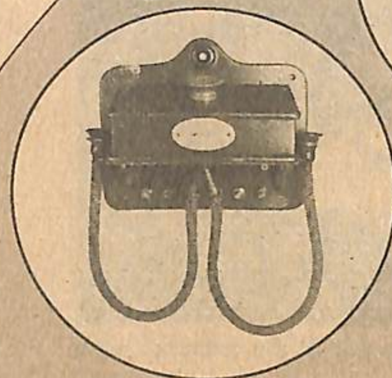
8. 1980 का बुद्धिमान फ़ोन। पिछले पचास सालों (1930-80) में फ़ोन के मॉडल में शायद कोई ख़ास परिवर्तन नहीं हुआ। लेकिन आठवें दशक के आरम्भ में फ़ोन पर से डायल का लोप होना शुरू हो गया। डायल की जगह ले ली पुश बटन ने।

9. 1990 का सेल्युलर फ़ोन।

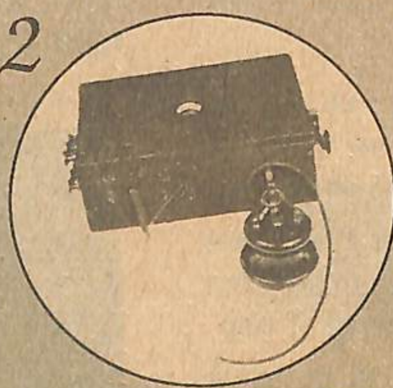
4



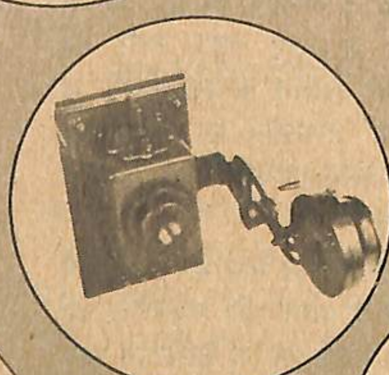
3



2



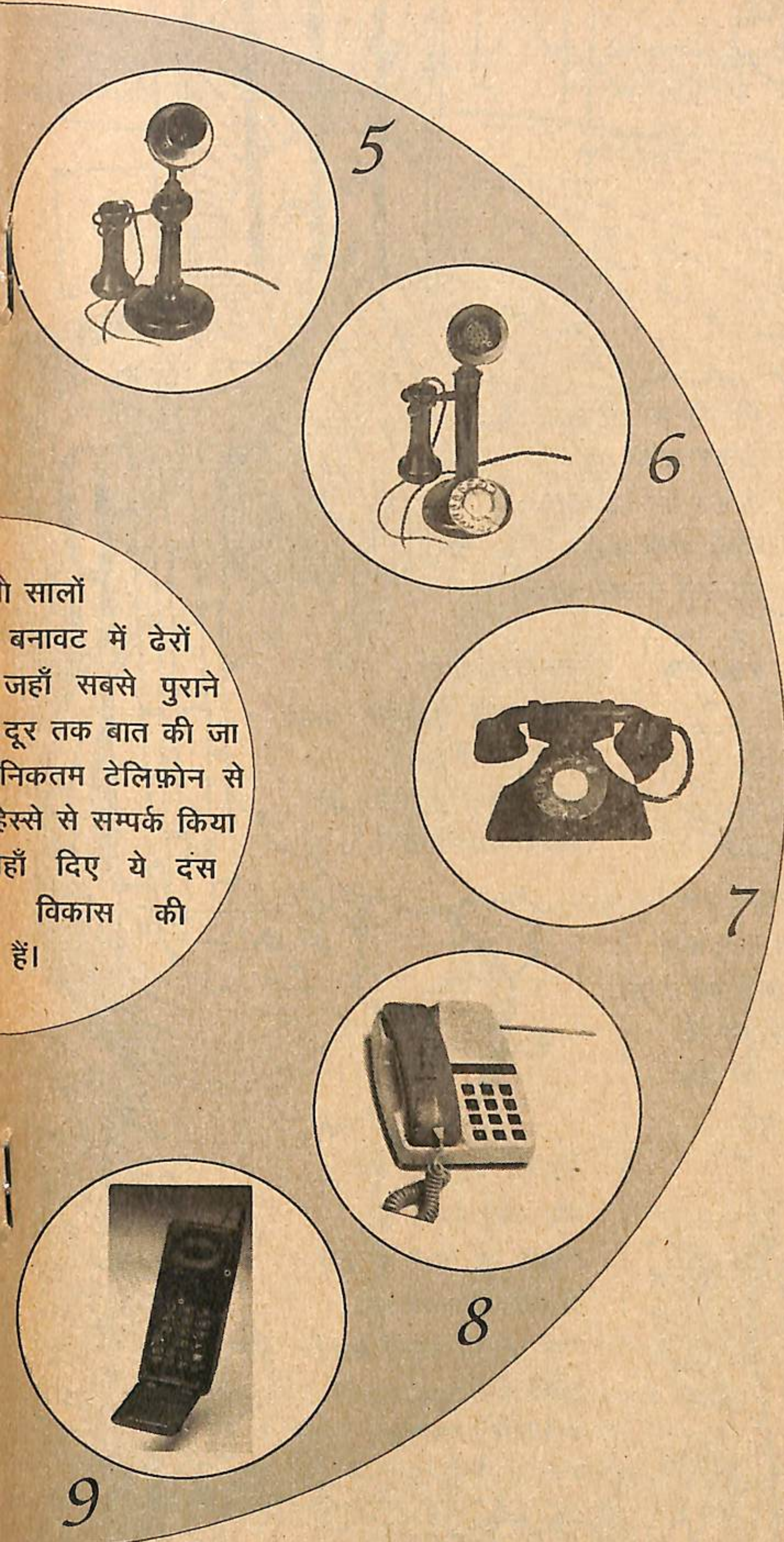
1



0



पिछले स
में टेलीफ़ोन की
परिवर्तन आए हैं।
टेलीफ़ोन से थोड़ी ही
सकती थी, वहीं आधु
दुनिया के किसी भी वि
जा सकता है। य
टेलीफ़ोन अपने
कहानी बताते



अपना टेलीफ़ोन बनाओ

हो सकता है इसे तुमने पहले भी बनाया हो, न बनाया हो तो अब बना डालो।

टेलीफ़ोन बनाने के लिए माचिस की डिब्बी के अन्दर के दो खोखे और दस- पन्द्रह मीटर लम्बा धागा जुगाड़ो।

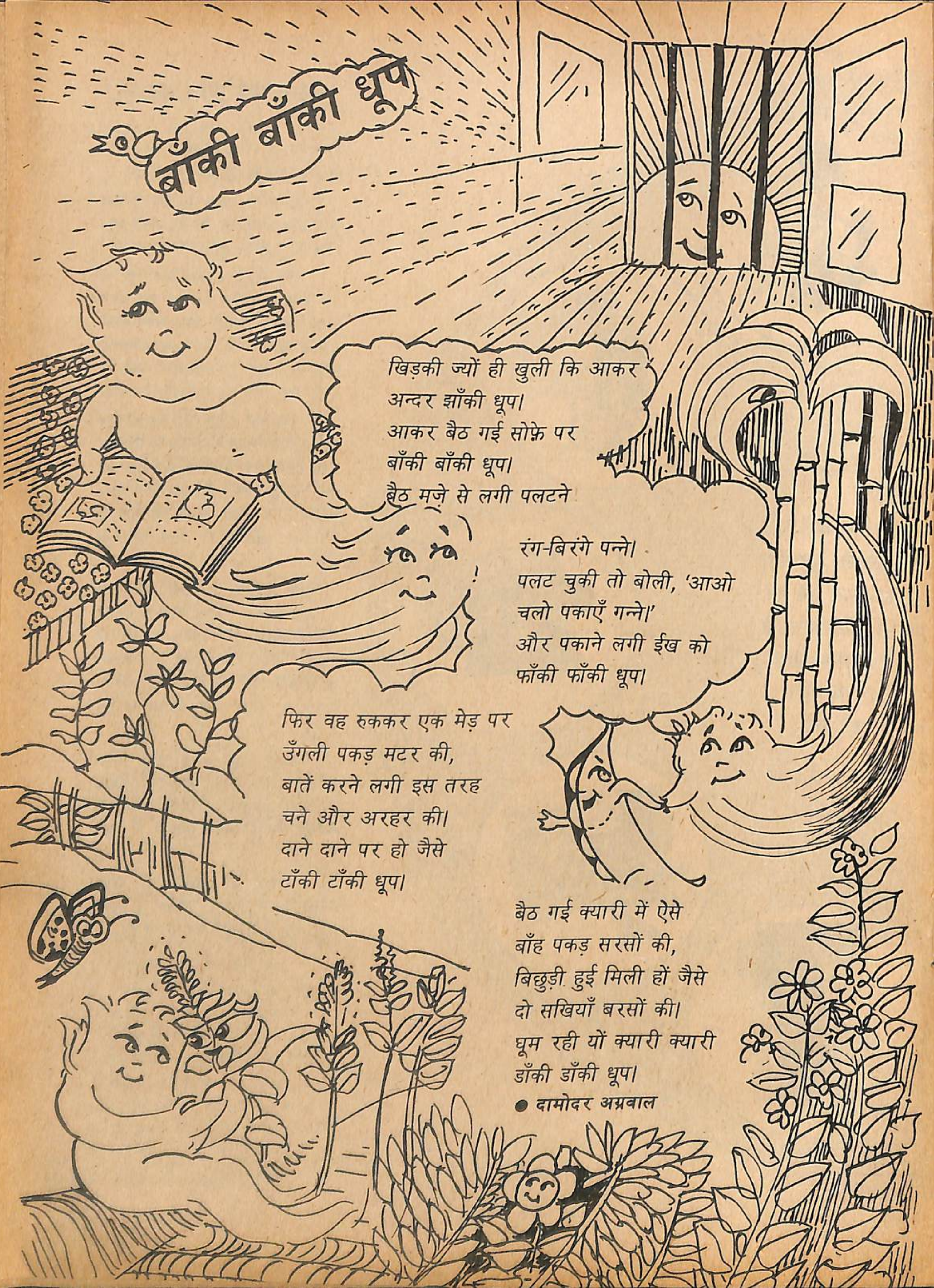
एक खोखे के बीचोंबीच सुई से एक छेद करो और धागे का एक सिरा उसमें पिरोकर दूसरी तरफ माचिस की एक तीली बाँध दो, ताकि धागा निकले नहीं। इसी तरह दूसरे खोखे में धागे का दूसरा सिरा बाँध दो। टेलीफ़ोन तैयार है।

अब एक खोखा खुद पकड़ो और दूसरा अपने किसी साथी को दे दो। अब दोनों इतनी दूरी पर खड़े हो जाओ कि धागा बिलकुल तना रहे। अब जो बोलना चाहता है व अपने खोखे को मुँह के पास लाए और सुनने वाला कान के पास।

बोलने पर ध्वनि तरंगों से खोखे के तले में क़म्पन होगा और ये कम्पन धागे से होकर दूसरे खोखे के तले पर पहुँचेंगे। इससे वह तला भी कम्पन करेगा और ध्वनि तरंगों को पैदा करेगा, जिससे तुम अपने दोस्त की आवाज़ सुन सकोगे।

ध्यान रहे धागा तना रहना चाहिए। अगर ढीला होगा या किसी चीज़ को छुएगा तो टेलीफ़ोन काम नहीं करेगा। क्योंकि कम्पन बीच में ही ख़त्म हो जाएँगे।

माचिस के खोखों की ज़गह आइसक्रीम के प्यालों, पावडर के डिब्बों आदि का भी उपयोग कर सकते हो।



बाँकी बाँकी धूप

खिड़की ज्यों ही खुली कि आकर
अन्दर झाँकी धूप।
आकर बैठ गई सोफ़े पर
बाँकी बाँकी धूप।
बैठ मज़े से लगी पलटने
रंग-बिरंगे पन्ने।
पलट चुकी तो बोली, 'आओ
चलो पकाएँ गन्ने।'
और पकाने लगी ईख को
फाँकी फाँकी धूप।

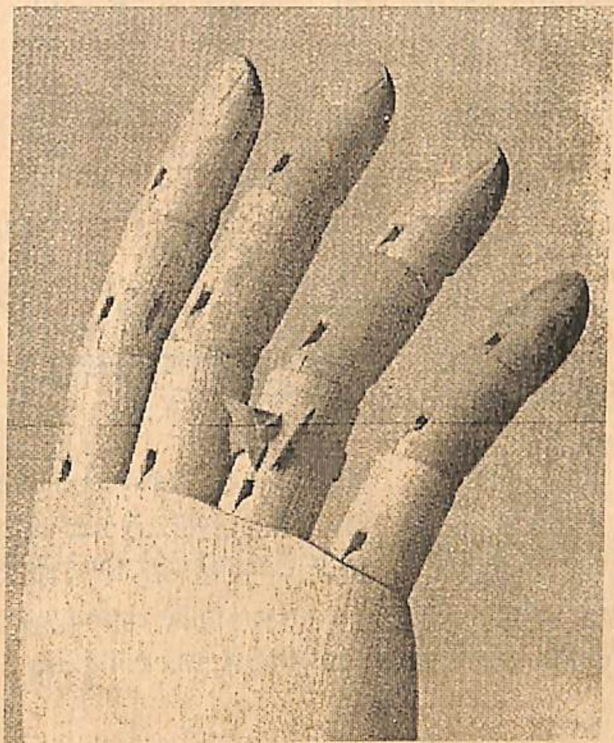
फिर वह रुककर एक मेड़ पर
उँगली पकड़ मटर की,
बातें करने लगी इस तरह
चने और अरहर की।
दाने दाने पर हो जैसे
टाँकी टाँकी धूप।

बैठ गई क्यारी में ऐसे
बाँह पकड़ सरसों की,
बिछुड़ी हुई मिली हों जैसे
दो सखियाँ बरसों की।
घूम रही यों क्यारी क्यारी
डाँकी डाँकी धूप।

● दामोदर अग्रवाल

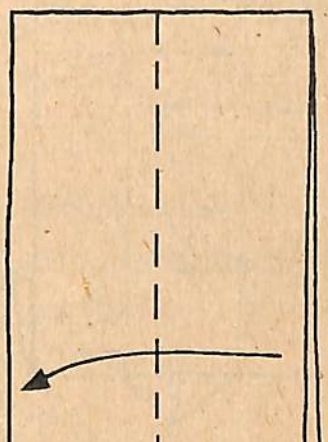
खेल कागज़ का

अँगूठी

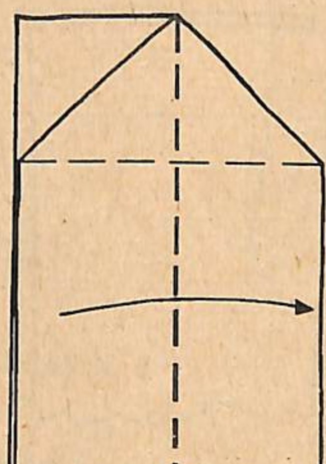




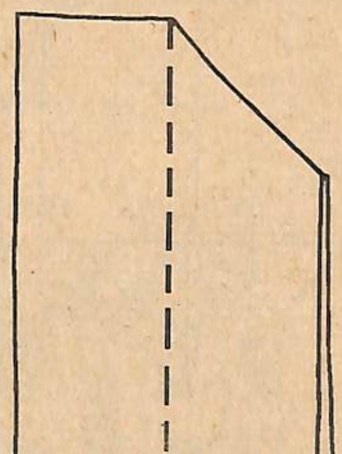
1. एक 2 से.मी. चौड़ी और 10 से.मी. लम्बी कागज़ की पट्टी लो। इसे चित्र में दिखाए अनुसार बीच से मोड़ लो। आगे के चित्रों को बड़ा करके दिखाया गया है।



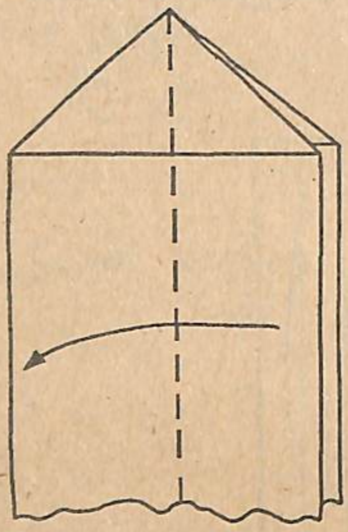
2. अब चित्र में दिखाई दे रही टूटी रेखा पर से तीर की दिशा में मोड़ बनाओ। सिर्फ़ ऊपरी सतह को ही मोड़ना। ऊपर के जुड़े सिरे को दबाकर चपटा कर दो।



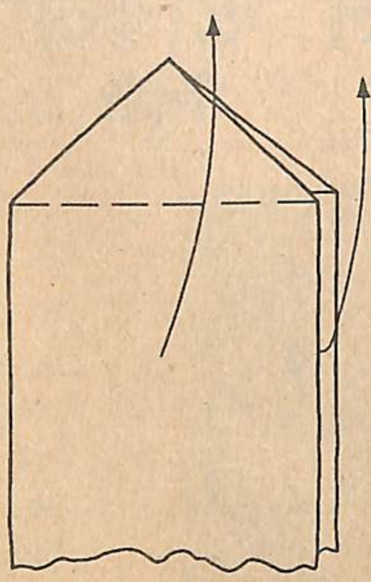
3. इस तरह। अब टूटी रेखा पर से तीर की दिशा में मोड़ बनाते हुए उसी ऊपरी सतह को वापस मोड़ दो।



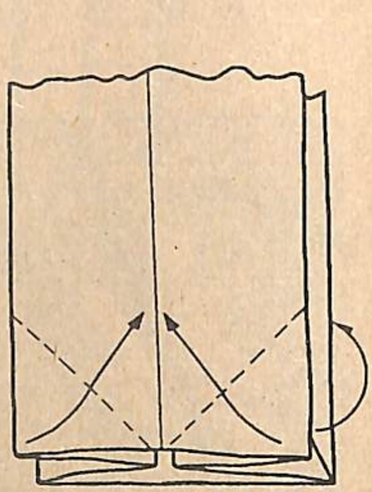
4. ऐसी आकृति बनेगी। अब बाएँ सिरे की ऊपरी सतह को टूटी रेखा पर से मोड़ो। और ऊपर के जुड़े सिरे को दबाकर चपटा कर दो।



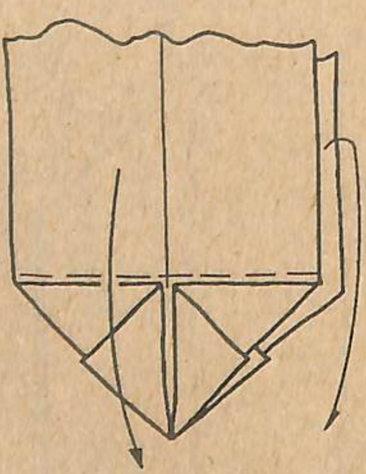
5. इस तरह। अब फिर दाईं ओर की ऊपरी सतह को वापस मोड़ लो।



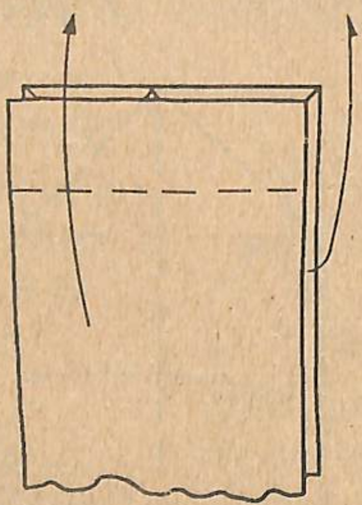
6. इस तरह की आकृति मिलेगी। अब टूटी रेखा पर से नीचे के हिस्से को ऊपर लाते हुए मोड़ लो। आकृति को पलटकर उस ओर का हिस्सा भी मोड़कर ऊपर ले आओ।



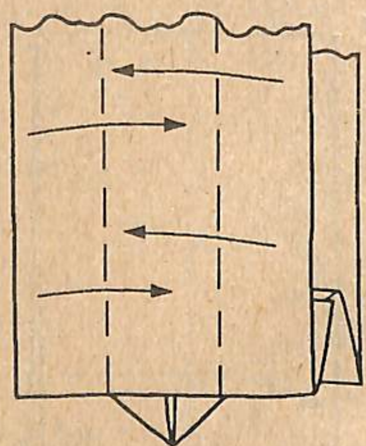
7. इस तरह की आकृति बनेगी। अब चित्र में दिखाई गई टूटी रेखा पर से ऊपरी सतहों को तीर की दिशा में मोड़ लो। आकृति को पलटकर दूसरी ओर भी इसी तरह से मोड़ लो।



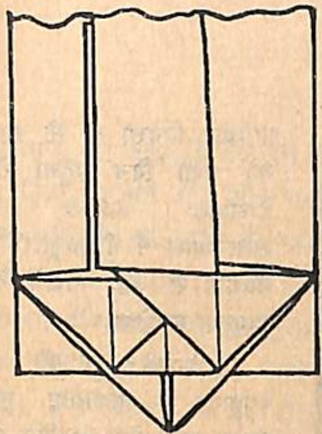
8. इस तरह की आकृति बनेगी। अब चित्र में दिख रही टूटी रेखा पर से ऊपर के हिस्से को मोड़कर नीचे लाओ। पीछे की ओर के हिस्से को भी इसी तरह मोड़कर नीचे की ओर ले आओ।



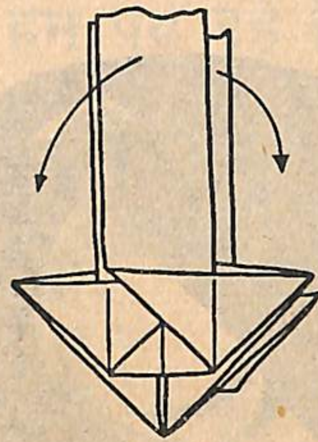
9. इस तरह की आकृति मिलेगी। अब चित्र में दिख रही टूटी रेखा पर से नीचे के हिस्से को तीर की दिशा में मोड़ लो। फिर आकृति को पलट लो और उस तरफ भी इसी तरह से मोड़ लो।



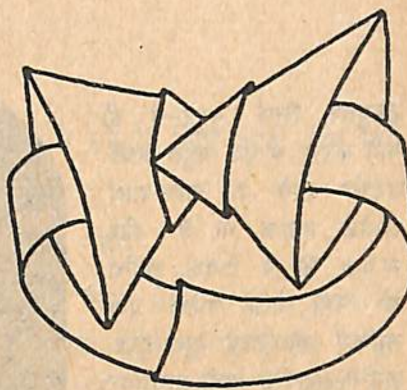
10. अब इस चित्र में दिखाई दे रही टूटी रेखाओं पर से तीर की दिशा में मोड़ बनाने हैं। पहले दाईं ओर के हिस्से को मोड़ो। इसे मोड़ते समय नीचे का जुड़ा सिरा दबाकर चपटा कर दो, जिस तरह चित्र-3 में किया था। इसी तरह बाईं ओर के हिस्से को भी मोड़ो।



11. इस तरह की आकृति मिलेगी। इस आकृति को पलट लो और फिर दूसरी तरफ भी चित्र-10 की क्रियाएँ दोहराओ।



12. ऐसी आकृति बनेगी। बस अब ऊपर की दोनों पट्टियों को चित्र में दिखाए तीरों की दिशा में मोड़ते हुए एक दूसरे में घुसा दो।



13. यह हो गई तुम्हारी तितली के डिज़ाइन वाली अँगूठी तैयार। तुम कुछ नए डिज़ाइन भी सोचो और बनाओ।

माथापच्ची : हल सितम्बर, 95 अंक के

1. (1) कलकत्ता (2) सागर (3) नेपानगर (4) अमृतसर (5) जबलपुर

2. चित्र - घ 

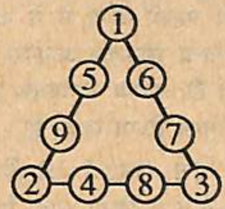
3. अक्षर 'य'

4. हमारे शरीर की जानकारी इस प्रकार है -

कुल हड्डियाँ	-	206
औसत तापमान	-	98.6^{0} फैरनहाइट
गुर्दे	-	2
छोटी आँत की लम्बाई	-	8 मीटर
पसलियाँ	-	12 जोड़ी

5. आधे दिन में पूरा काम करने के लिए कुल 48 लोग लगेंगे। यानी 42 लोग और मँगाने होंगे।

6. 20 रु. के दो नोट, 10 रु. का एक, 5 रु. का एक और 2 रु. के चार नोट, कुल 63 रु. बनते हैं।

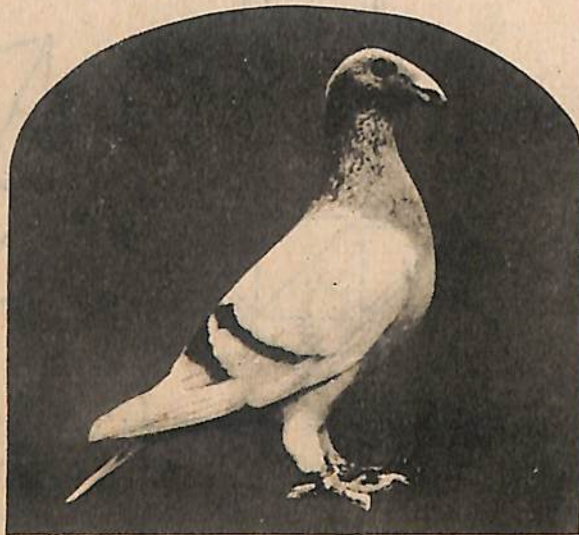
7. 

वर्ग पहेली - 49 : हल

1 क	क	2 ह	रा		3 र	4 म	ज़ा	5 न
त		क		6 पें		मी		जू
7 र	वाँ		8 गु	ग	9 ली		10 बा	म
ब्यों			न		क		षिं	
11 त	12 न	की	ह		13 पी	ठ	दे	14 ना
	श्त		गा		ट			मु
15 सु	र		16 र	17 वा	ना		18 म	म
दा		19 ट		ह		20 दा		कि
21 मा	र	का	ट		22 र	स	खा	न

वर्ग पहेली - 49 का सही हल भेजने वाले एक मात्र पाठक हैं प्रदीप तिर्की, चन्दौरा, प्रतापपुर, मध्य प्रदेश। इनको तीन माह तक उपहार में चकमक भेजी जाएगी।

कबूतर ...जा.. जा...



कबूतर सिर्फ़ गुटुर-गूं ही नहीं करते, वे एक बहुत अच्छे उड़ाके होने के साथ-साथ सन्देश वाहक भी हैं। और सन्देश भी वे केवल शान्ति का नहीं देते। बल्कि एक डाकिए की तरह सुख-दुख, शान्ति-अशान्ति सभी समाचार लाते-ले जाते हैं। सन्देश ले जाने वाले कबूतरों को कासिद या नामावर कहा जाता है।

सन्देश ले जाने के लिए हुमर प्रजाति के कबूतरों को ख़ास प्रशिक्षण दिया जाता है। कहते हैं इस प्रजाति के कबूतर 120 किलोमीटर प्रति घण्टा की रफ़्तार से उड़ सकते हैं। ये लगातार दस घण्टे तक उड़ सकते हैं। आमतौर पर काग़ज़ पर लिखे सन्देश प्लास्टिक की थैली में रखकर कबूतरों के पैरों में बाँध दिए जाते हैं। सन्देश गुप्त या सांकेतिक भाषा में हो सकते हैं।

उड़ीसा के ज़िला मुख्यालयों तथा पुलिस चौकियों पर ऐसे कबूतरों को रखा गया है। यहाँ प्रशिक्षित कबूतरों की तीन श्रेणियाँ हैं। पहली श्रेणी में वे कबूतर आते हैं जो आमतौर पर मुख्य केन्द्र छोड़कर आकाश में स्वतंत्र रूप से घूमते रहते हैं। बहुत ही अधिक आवश्यक होने पर इस श्रेणी के कबूतरों को इस्तेमाल किया जाता है।

दूसरी श्रेणी ऐसे कबूतरों की है जिनका उपयोग अपराधियों की छान-बीन में किया जाता है।

तीसरी श्रेणी के कबूतर ऐसे हैं जिन्हें अपने केन्द्र से अधिक से अधिक पचहत्तर किलोमीटर दूर तक जाने की इजाज़त होती है। वे इसी दूरी तक सन्देश लाते या ले जाते हैं।

उड़ीसा पुलिस बाढ़, दंगे या ऐसी ही अन्य कठिन और जटिल परिस्थितियों में इन कबूतरों का इस्तेमाल करती आ रही है।

कबूतरों से सन्देश भेजने का इतिहास बहुत पुराना है। हज़ारों साल पहले यह पक्षी युद्ध में भी प्रमुख भूमिका निभाता था। चन्द्रगुप्त मौर्य के महामन्त्री चाणक्य (320 ईसा पूर्व) ने कौटिल्य अर्थशास्त्र में लिखा है कि 'एक राजा दूसरे राजा को यदि युद्ध में हराना चाहता है तो उसे इस बात का प्रचार करना चाहिए कि उसके पास शत्रु की गतिविधियों की टोह लेने के लिए उन्नत साधन हैं। इन साधनों में ऐसे सन्देशवाहक कबूतर भी हैं, जो घटनाओं के समाचार विदेशों से भी राजा को उसी दिन पहुँचा देते हैं।सम्राट अशोक के शासनकाल में भी कबूतरों के माध्यम से डाक भेजने की व्यवस्था प्रचलित थी।

तेरहवीं शताब्दी में बगदाद में बक़ायदा एक कपोत डाक सेवा स्थापित की गई थी। अबुल फ़ज़ल (एक प्राचीन लेखक) के अनुसार अकबर के पास ऐसे बीस हज़ार प्रशिक्षित कबूतर थे।

1850 में दुनिया की पहली विश्वव्यापी संवाद समिति रायटर स्थापित हुई थी। समिति के संस्थापक जूलियस रायटर ने जर्मनी के दो नगरों ब्रुसेल्स और आचेन के बीच कबूतरों द्वारा डाक संवाद भेजने का काम शुरू किया था।

सन्देश वाहक कबूतरों के बारे में कई क़िस्से मशहूर हैं। ऐसे ही एक क़िस्से के अनुसार 1972 के ओलम्पिक खेलों के दौरान दुनियाभर के संवाददाता और कैमरामेन अपने अख़बारों के लिए सामग्री जुटाने में लगे थे। हर कोई एक से एक आधुनिकतम साधनों की मदद ले रहा था। एक कैमरामेन केवल कबूतर की मदद ले रहा था। जल क्रीड़ाओं के फ़ोटो खींचने के लिए वह खुद भी एक नाव में सवार था। जैसे ही उसकी फ़िल्म पूरी हो जाती, तो वह कैमरे से रील निकालकर कबूतर के गले में बाँधकर उड़ा देता। कबूतर सीधा अख़बार के कार्यालय में पहुँच जाता था।

कबूतरों का इस्तेमाल जासूसी करने में भी किया जाता रहा है। जंगलों में आग लगने पर जंगल के चौकीदार अपने अधिकारियों को कबूतरों के माध्यम से सन्देश भेजते रहे हैं।

वन्य जीवन के एक प्रसिद्ध लेखक श्री रामेश बेदी ने अपनी एक किताब में लिखा है कि, 'हम एक बहेले (पक्षी पकड़ने वाला) के साथ जंगल में पक्षियों को पकड़ने के तरीक़ों को देखने जाया करते थे। हम लोग जंगल में घर से आठ-नौ किलोमीटर दूर तक निकल जाते थे। बहेला जब अपना काम ख़त्म कर लेता और घर लौटना शुरू करता, तो अपने पालतू कबूतर को उड़ा देता। वह सीधा घर पहुँचता। उसे देखकर बहेले पत्नी समझ जाती कि उसके पति कुशल हैं और घर की तरफ लौटने लगे हैं।' ❑

हम पढ़ रहे हैं

❑ दिलजीत सिंह सिख

भगवान का शुक्र है जिसने हमें स्कूल दिए, पढ़ने के लिए किताबें दीं। और पढ़ाने वाले मास्टर दिए। इन मास्टरों का काम ही क्या, बस स्कूल में बच्चों को पढ़ाना है। पर मास्टर हैं कि पढ़ा कुछ नहीं रहे, आराम से आपस में इधर-उधर की गप्पें दे रहे हैं। हम भी स्कूल में पढ़ने जाते हैं। पढ़ना-लिखना तो क्या, बस आराम से बैठे हैं। हमारा स्कूल रोड पर स्थित होने के कारण हम रोड पर आते-जाते वाहनों को देख रहे हैं। चलो घर के काम करने से तो बचे हैं। वैसे घर में हमें कोई कठिन काम नहीं करना पड़ता। पिता जी दफ़्तर चले जाते हैं। बड़े भैया जीप चलाते हैं। छोटू तो अभी खेलने में ही मस्त रहता है। हमें पढ़ने के सिवा कोई दूसरा काम करना नहीं पड़ता। कभी-कभार घर में थोड़ा बहुत काम करना पड़ता है।

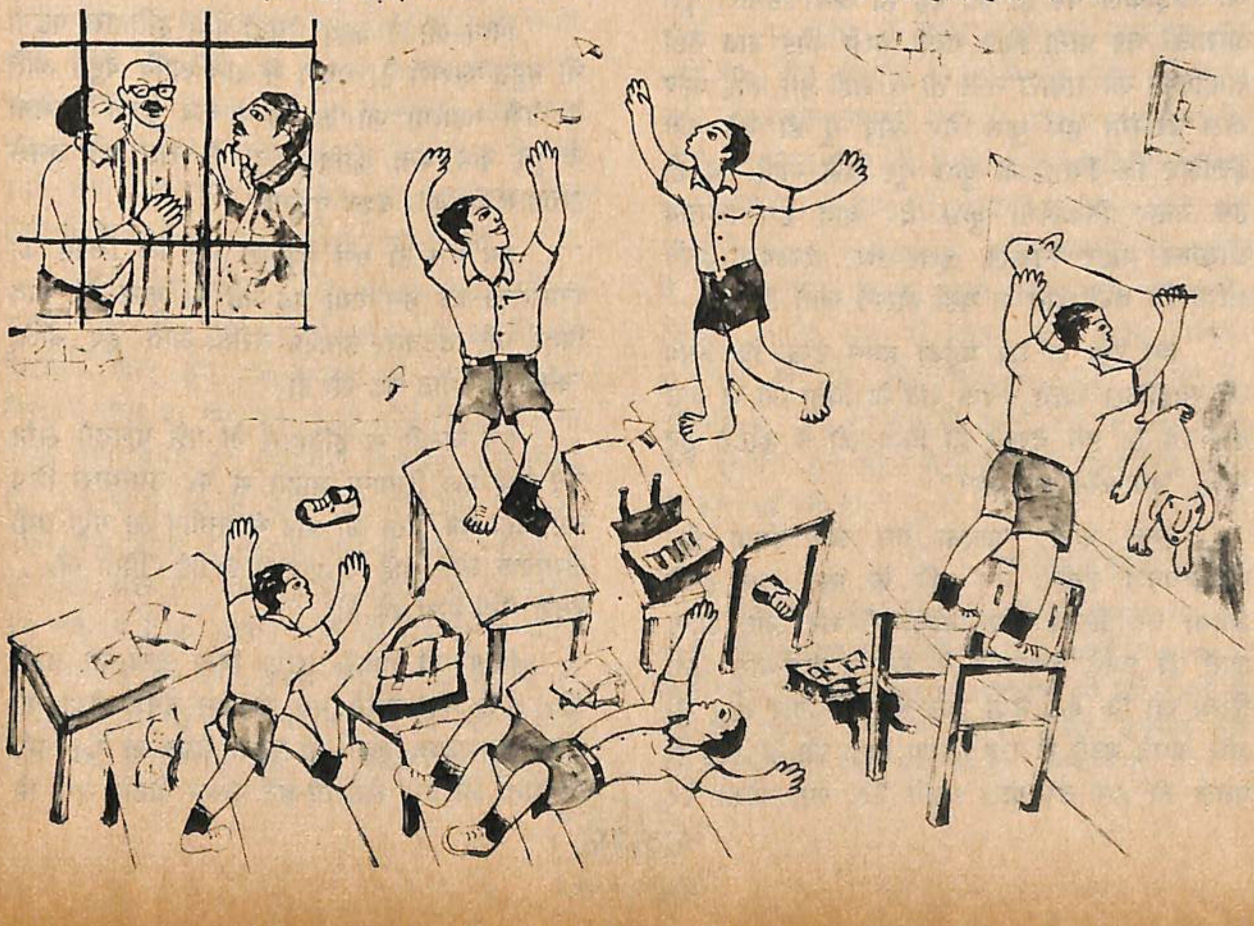
आज रविवार है, स्कूल में छुट्टी है और पिता जी के दफ़्तर में भी छुट्टी है। हम घर में बैठे हैं। पिता जी ने कहा, ''पढ़ो बेटा पढ़ो, परीक्षा पास आ रही है। क्या मास्टरों ने घर के लिए कोई काम नहीं दिया।''

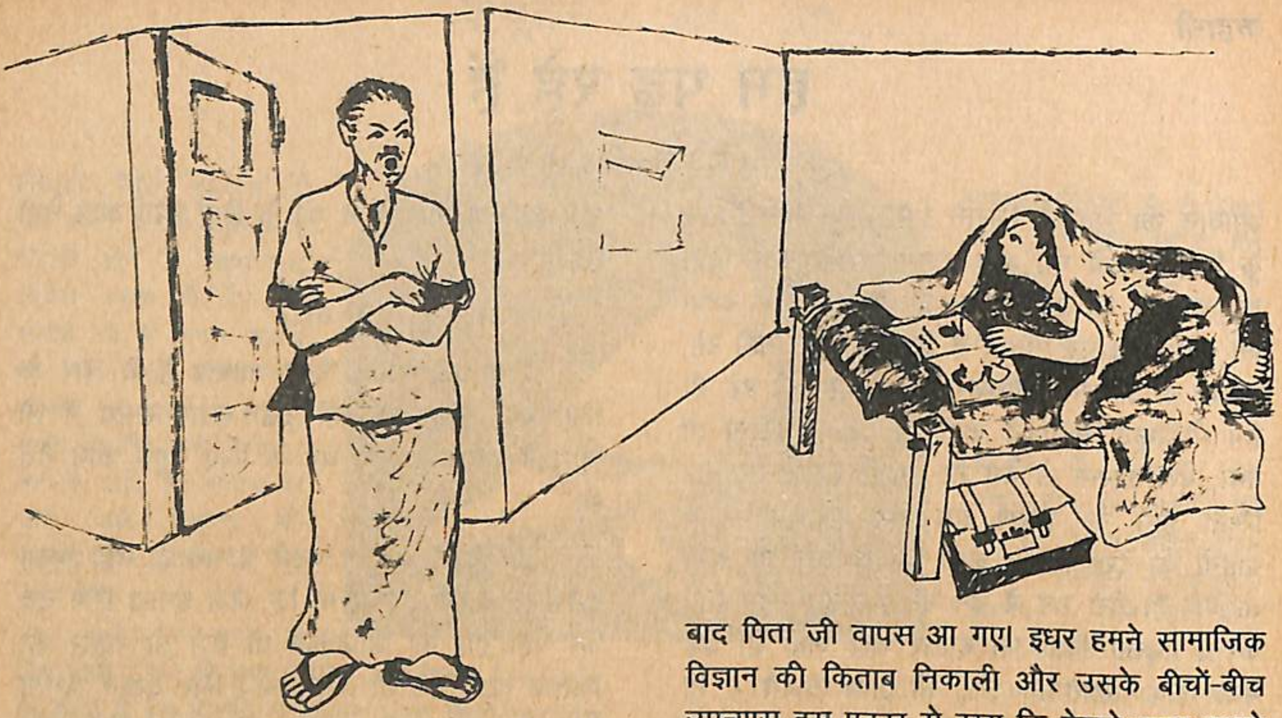
हमने कहा, ''जी नहीं।''

पिता जी बोले ''कैसे मास्टर हैं ये, घर के लिए कोई काम ही नहीं देते। हमारे समय में तो छुट्टी में हमारे मास्टर घर के लिए बहुत काम देते थे।"

हम पढ़ने बैठे तो पढ़ने में मन ही नहीं लगा। हमें ऐसा प्रतीत होने लगा कि जैसे हमारा सिर दर्द कर रहा हो। भई आजकल तो वैसे ही स्कूल की किताब पढ़ने बैठें तो अपने आप सिर दुखने लगता है। यदि स्कूल की पुस्तक की जगह कोई और पुस्तक हो तो पढ़ने में मन भी लगे।

हमें पता है कि आज पिता जी को कहीं बाहर जाना है। हम इस इन्तज़ार में बैठे हैं कि पिता जी कब बाहर जाएँ और हम साइकिल की सवारी करें। पिता जी हैं कि तैयार होते-होते भी तीन घण्टे लगा





दिए। वैसे ऐसी बात नहीं, पिता जी जल्दी ही तैयार हो जाया करते हैं। हमने सोचा कि आज पिता जी को जाना ही देर से होगा। हम यहाँ किताब लिए परेशान बैठे हैं। आख़िर तीन घण्टे बाद पिता जी तैयार होकर चलने लगे तो हमने देखा कि पिता जी साइकिल पर ही जा रहे हैं। अब? हमारी पूरी आशाओं पर पानी फिर गया। चलो कोई बात नहीं साइकिल की सवारी नहीं तो न सही हम कोई और खेल खेलेंगे। हम कुछ देर और यूँ ही बैठे रहे। इसलिए कि पिता जी कुछ दूर चले जाएँ तब ही हम बाहर निकलेंगे। कुछ देर बाद हम किताब छोड़कर बाहर निकले। इधर-उधर देखकर हमने सोचा कि चलो रवि के यहाँ खेलने जाते हैं।

हम रवि के घर पहुँचे। हमने देखा कि पिता जी साइकिल खड़ी करके रवि के पिता जी से बातें कर रहे हैं। हमें देखते ही पिता जी ने डाँटते हुए पूछा, "क्या लेने आए हो?"

हमने कहा, "अपना पेन लेने आया हूँ।" सौभाग्यवश हमारा पेन रवि के पास था। हमने अपना पेन लिया और जल्दी से घर लौट आए। आते ही हमने अलमारी में से वह उपन्यास उठा लिया जो कि बड़े भैया कल ही ख़रीदकर लाए थे। और अपने बस्ते में रख लिया। पिता जी के आने से पहले ही हम उपन्यास पढ़ने बैठ गए। थोड़ी देर बाद पिता जी वापस आ गए। इधर हमने सामाजिक विज्ञान की किताब निकाली और उसके बीचों-बीच उपन्यास इस प्रकार से रखा कि देखने वाला समझे कि हम इतिहास पढ़ रहे हैं। हम इतिहास में दबाकर उपन्यास पढ़ने लगे तो हमें मज़ा आने लगा। पिता जी ने दूर से ही देखते हुए पूछा, "क्या इतिहास पढ़ रहे हो?"

हमने कहा, "जी हाँ।"

पिता जी ने कहा, "पढ़ो-पढ़ो इतिहास पढ़ना भी बहुत ज़रूरी है। पेपरों में सन् आदि बहुत आते हैं जैसे महात्मा जी का जन्म कब हुआ। फलाना कानून कब बना आदि-आदि। मैं रात को तुमसे इतिहास के कुछ प्रश्न पूछूँगा।"

हम मन ही मन मुस्कुरा पड़े कि किसी को क्या पता कि हम क्या पढ़ रहे हैं। कुछ देर बाद पिता जी उठकर हमारी तरफ आते हुए बोले, "कौन- सा पाठ पढ़ रहे हो?"

हम जल्दी से इतिहास के पन्ने पलटने लगे। हम उपन्यास छिपाना चाहते थे पर उपन्यास छिप नहीं रहा था। पिता जी और भी समीप आ गए। तभी अचानक छोटे भाई ने आवाज़ लगाई "पिता जी ... रमेश भैया बुला रहे हैं।"

पिता जी हमारी तरफ बिना देखे ही उल्टे पाँव लौट गए। हमने मन ही मन रमेश भैया को दुआ दी। अच्छा हुआ जो रमेश भैया आ गए नहीं तो पिता जी देख लेते तो हमें ज़रूर पीटते। एक तो

हम उपन्यास पढ़ रहे हैं दूसरा वह भी इतिहास में छिपाकर। रमेश भैया हमारे पड़ोसी हैं। हमने जल्दी से किताब में से उपन्यास निकाला और पास ही पड़े पलंग पर बिछे चादर के नीचे छिपा दिया। और इतिहास के पन्ने पलटने लगे।

किसी तरह हमने वह दिन काटा और फिर रात में कुछ पढ़ा, कुछ लिखा, कुछ चित्र बनाए। अगर मास्टरों ने घर के लिए कुछ काम दिया होता तो हम करते भी। अच्छा हुआ कि पिता जी ने इतिहास के प्रश्न नहीं पूछे। दूसरे दिन सोमवार को हम स्कूल गए, जाकर बैठ गए और इधर-उधर देखने लगे। मास्टर आपस में इधर-उधर की बातें करने लगे। तभी अचानक हमारे पिता जी स्कूल में पहुँच गए। हमने जल्दी से किताब निकाली और पढ़ने लगे। पिता जी ने मास्टरों को नमस्कार किया और उनके पास कुर्सी पर बैठ गए। कुछ इधर-उधर की बातें करने के बाद पिता जी बोले, "बच्चों को पढ़ाया-लिखाया करो, कुछ घर के लिए भी काम दिया करो। घर जाकर आराम से खेलते रहते हैं। इन्हें पता ही नहीं कि घर में भी कुछ पढ़-लिख लें।"

मास्टर बोले, "हाँ घर के लिए भी काम दिया करेंगे।" पिता जी चले गए तब कहीं हमने राहत की साँस ली। मास्टर फिर बतियाने लगे। छुट्टी के समय बोले कल एक पाठ की नकल करके लाना। घर पहुँचे, रात में नकल की। हमने सोचा, 'ऊँह अब नकल करनी पड़ रही है। पहले तो आराम से बैठे रहते थे।' इसी तरह दिन निकलते गए। हम चोरी छिपे किताबों में रखकर उपन्यास पढ़ते रहे।

कोई डेढ़ महीने बाद परीक्षा हुई। परीक्षा दूसरे स्कूल में हुई जिसमें बहुत से स्कूलों के विद्यार्थी आए हुए थे। परीक्षा में लगभग सभी विद्यार्थी फेल हो गए। शायद ही कोई विद्यार्थी होगा जिसे तीन विषय की सप्लीमेंट्री तक सफलता मिली हो। हम सोच रहे हैं क्या सभी विद्यार्थी फेल हो गए? क्या हमारे स्कूल के अलावा अन्य स्कूलों में भी यही हाल है? हम यह भी सोचते हैं कि पढ़ने का मतलब सिर्फ़ कक्षाएँ थोड़े ही गिनना है। पढ़ने का मतलब तो ज्ञान प्राप्त करना है। किताबें तो सिर्फ़ ज्ञान प्राप्त करने का माध्यम हैं। और कक्षाएँ वह श्रेणी हैं जिससे यह पता चलता है कि हमने कितना ज्ञान प्राप्त कर लिया है। हमने जितनी विद्या प्राप्त कर ली उससे आगे दूसरी कक्षा मिल गई।

अभी गर्मियों की छुट्टियाँ हैं। हम फालतू ही इधर-उधर घूमा करते हैं। कभी दोपहर में घर में पंखे के नीचे सो जाते हैं। कभी बाहर घूम आते हैं। कुछ दिनों बाद हमारी बड़ी बहन हरियाणा से लौटीं तो उन्होंने बताया कि वहाँ के स्कूलों में भी बहुत से विद्यार्थी फेल हो गए हैं। हम सोचने लगे क्या भारत के सभी प्रदेशों में ऐसा होने लगा है? क्या पूरे भारत के विद्यार्थी फेल होने लगे हैं? इस तरह तो सारा भारत अशिक्षित होता जाएगा। कुछ लोगों से सुना है कि भारत के अलावा अन्य देश बहुत पढ़े लिखे हैं। विदेशों में अच्छे-अच्छे डाक्टर हैं। अच्छे-अच्छे वैज्ञानिक हैं। मगर हमारा मत दूसरा है। हम सोचते हैं अरे छोड़ो विदेशियों को। ऐसी-तैसी कराने दो विदेशवासियों को। भारत में कौन डाक्टर और वैज्ञानिक नहीं है। हम अपने देश में पढ़ें या ना पढ़ें इन विदेशियों से क्या करना। हमारा देश भारत है। हम अपने देश में कुछ भी कर सकते हैं। हम स्वतंत्र हैं, पूरी तरह आज़ाद हैं। हमने अपना देश आज़ाद करवाया है।

मगर दूसरे ही पल हमारे दिमाग़ में ख़्याल आया कि ऐसा सोचना भी ग़लत है। ऐसे तो हमारा भारत अन्य देशों से बहुत पीछे रह जाएगा। हम अशिक्षित होते जाएँगे तो आगे चलकर हमें पता नहीं रहेगा कि क्या हो रहा है और क्या करना है। कोई हमें देगा कुछ तो लिखेगा कुछ और फिर पूरा भारत दोबारा ग़ुलाम हो जाएगा। भगवान करे इन मास्टरों को कुछ अक़्ल दे, कुछ सोचने की शक्ति दे, कुछ समझ दे। ये बच्चों को अच्छी शिक्षा दें। जिससे भारत सच में महान् बन सके। भविष्य उज्ज्वल हो सके। ख़ैर। भगवान सबको देखता है। भगवान ने चाहा तो हम भी अपने देश के लिए कुछ कर सकेंगे। हम भी पूरी-पूरी कोशिश करेंगे। अभी तो हम पढ़ रहे हैं। ☐

सभी चित्र : प्रकाश पाटीदार

(दिलजीत की कविता, कहानियाँ चकमक में 'मेरा पन्ना' में प्रकाशित होती रही हैं। 'मेरा पन्ना' चकमक के बाल रचनाकारों का स्तम्भ है। दिलजीत की इस रचना में हमें एक वयस्क रचनाकार उभरता दिखा, इसलिए इसे हम मेरा पन्ना से बाहर छाप रहे हैं। - सम्पादक।)



माथापच्ची

(1)

इन रंग-बिरंगे वाक्यों में से रंगों को ढूँढ निकालोः

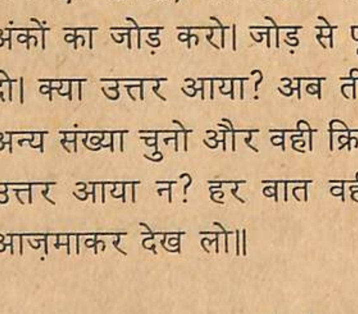
1. राधा, एक गिलास पानी लाओ।
2. यह बैग नीलिमा का है।
3. वह लड़का लापरवाह है।
4. कल सुबह राबिया आ रही है।
5. गिरिजा मुनीर से मिलने गई है।
6. अनीस, अपनी कापी लाओ।
7. माला लकड़ी लाने जंगल गई है।

● प्रदीप गजपाल, बोरई, दुर्ग, म.प्र.

(2)

तीन अंकों की एक ऐसी संख्या लो, जिसमें तीनों अंक एक ही हों, जैसे 666 या 555। अब तीनों अंकों का जोड़ करो। जोड़ से पूरी संख्या में भाग दो। क्या उत्तर आया? अब तीन अंकों की कोई अन्य संख्या चुनो और वही क्रिया करो। फिर वही उत्तर आया न? हर बात वही उत्तर आता है। आज़माकर देख लो॥

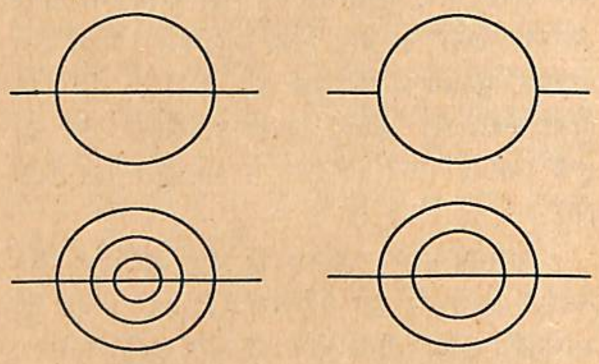
(3)



इस चित्र में सात चाबियाँ हैं। एक ताला है जो इनमें से छह चाबियों से खुल जाता है, पर एक से नहीं। वह एक चाबी कौन-सी है?

(4)

तुमने ऐसी पहेलियाँ कई बार सुलझाई होंगी कि इस चित्र को बिना पेन्सिल उठाए बनाकर दिखाओ। यहाँ तुम्हें यह पहचानना है कि इनमें से कौन-से चित्र इसी तरीक़े से, बिना पेन्सिल उठाए, बनाए जा सकते हैं?



(5)

रेस के दो धावक सुबह की कसरत के बाद घर लौटते हुए बातचीत कर रहे थे। एक ने कहा, "आज मेरी गति में ख़ासा सुधार दिखाई दिया। आज मैंने एक मील की दूरी 4.12 मिनिट में पूरी की।" तब दूसरे ने कहा, "मेरी गति भी पहले से अच्छी हो गई है। और मज़ेदार बात यह है कि यही आँकड़ा मेरी रफ़्तार में भी आता है। फ़र्क सिर्फ़ इतना है कि मैं 4.12 मील एक घण्टे में दौड़ लिया।"

तुम्हारा क्या ख्याल है, दोनों में से कौन ज़्यादा तेज़ दौड़ता है?

(6)

बताओ वह कौन-सा महीना है जिसमें लोग सबसे कम बातें करते हैं?

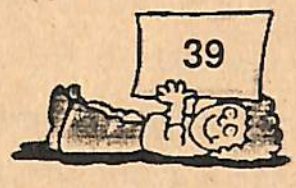
(7)

एक कमरा है। उसके चारों कोनों पर एक-एक बिल्ली बैठी हुई है। हर बिल्ली के सामने उससे नज़रें मिलाती एक बिल्ली है। और हर बिल्ली की पूँछ पर एक बिल्ली बैठी है। तो कमरे में कुल कितनी बिल्लियाँ हुईं?

(8)

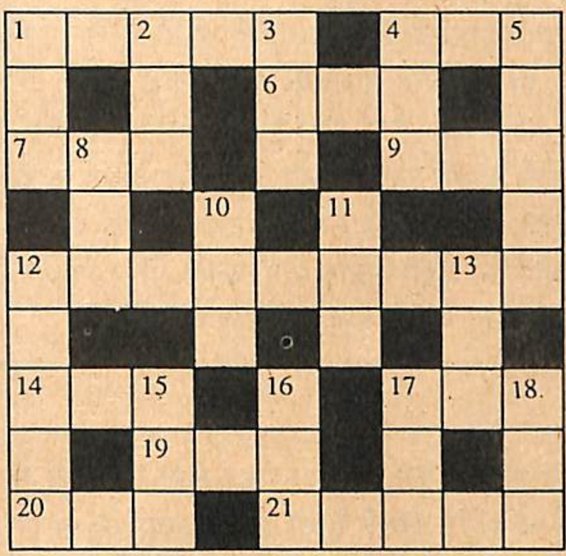


को



में से कितनी बार घटा सकते हो?

वर्ग पहेली - 52



संकेत : बाएँ से दाएँ

1. मेहनताना (5)
4. बराबरी का भाव (3)
6. वह मरेगा शक करते-करते (3)
7. नून (3)
9. तोता . . . . . . (3)
12. एक फल और बीमारों के बारे में एक लोकोक्ति (2,3,1,3)
14. जो रीति के गड़बड़ से बहुमूल्य चीज़ों की अलमारी बने (3)
17. संकेत 12 में बीमारों की संख्या (3)
19. जिसे चाटो तो ख़ुशामद कहलाए (3)
20. रात ना गाना इस शैली में (3)
21. भूमध्य रेखा से 23.5° दक्षिणी अक्षांश से गुज़रने वाली रेखा (3,2)

संकेत : ऊपर से नीचे

1. ऊपर आकाश, बीच में ज़मीन और नीचे . . . . . ? (3)
2. श्रमिक के भ्रमण में बौद्ध भिक्षु है (3)
3. कलरव की काट-छाँट में किताब का आवरण (3)
4. बस मरना ही तो है, युद्ध में (3)
5. तात और वरक़ के मेलजोल में बलवान है (5)
8. शतरंज का मोहरा (3)
10. धारा का साथी (3)
11. सौ बार सटीक हो, परखना तो पड़ेगा (3)
12. सावधानी (5)
13. ज़रिए (3)
15. विपरीत ना बोलो, ख़त्म हो जाएगा (3)
16. अमन वार्ता में जनता कहाँ है? (3)
17. अचरज शती में पेड़ ढूँढो (3)
18. पेड़ की छोटी टहनी (3)

● मनोहर लश्करी, मगजपुरा, धार, म. प्र.

सर्वशुद्ध हल भेजने वालों को चकमक तीन माह तक उपहार में भेजी जाएगी। हल के लिए वर्ग पहेली की जाली को चकमक से काटकर न भेजें, बल्कि उसमें जो शब्द आने वाले हों उन्हें संकेत के ही नम्बर देकर लिख दें। वर्ग पहेली-52 का हल जनवरी, 96 अंक में देखें।

टेलीफ़ोन का चोंगा

यूँ तो टेलीफ़ोन की बाहरी बनावट इसके आविष्कार से लेकर अब तक, लगातार बदलती रही है। और इसमें बहुत से नए ताम-झाम जुड़ते रहे हैं। परन्तु टेलीफ़ोन के चोंगे के काम करने का सिद्धान्त वैसे का वैसा ही है। सिद्धान्त मोटे तौर पर यही है कि ध्वनि तरंगों को विद्युत तरंगों में बदला जाए ताकि उन्हें एक जगह से दूसरी जगह ले जाया जा सके और वहाँ उन्हें फिर से वापस ध्वनि तरंगों में बदल दिया जाए ताकि दूसरे छोर पर टेलीफ़ोन उठाने वाला व्यक्ति आवाज़ सुन सके।

यहाँ क्या हम यह मानकर चलें कि ध्वनि या आवाज़ क्या है और कैसे एक जगह से दूसरी जगह पहुँचती है, यह तुम्हें मालूम है? चलो, मोटे-मोटे तौर पर समझते चलते हैं। आवाज़ पैदा होती है किसी भी चीज़ के काँपने से। मलेरिया के बुखार की कँपकँपी से नहीं! ध्वनि उत्पन्न करने के लिए ज़रूरी कम्पन उससे कहीं तेज़ और महीन होते हैं। जब हम बोलते हैं तो जो आवाज़ पैदा होती है, वो हमारे गले में मौजूद कुछ तारों (वाक्‌तन्तुओं) के कम्पन के कारण ही होती है। हाँ, इन आवाज़ों को अलग-अलग स्वरों का रूप हमारा मुँह, जीभ, तालु, दाँत, होंठ आदि मिलकर देते हैं। ज़रा गले पर हाथ रखकर कुछ बोलकर देखो। अब गाल पर या होंठों पर हाथ रखकर वही चीज़ बोलकर देखो। अन्तर पता चला? चूँकि आवाज़ गले में पैदा होती है इसलिए वहाँ हाथ रखकर बोलने से हल्का-सा कम्पन हम महसूस कर सकते हैं। इकतारा, सितार या किसी अन्य तार वाले बाजे के तारों को छेड़कर भी तुम देख सकते हो कि कैसे कम्पन होता है, जब ध्वनि उत्पन्न होती है।

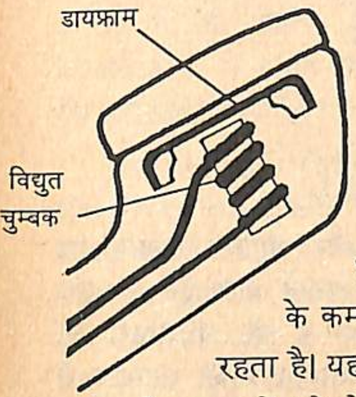
अब रही बात कि यह ध्वनि एक जगह से दूसरी जगह पहुँचती कैसे है। तुमने देखा होगा कि पानी में पत्थर डालने से लहरें उठती हैं। इसी तरह जब कोई चीज़ ध्वनि पैदा करती है तो उसके कम्पन के कारण उसके आसपास की हवा में लहरें उठती हैं। इन्हें ध्वनि की तरंग कहा जाता है। कहते हैं ध्वनि की तरंगें किसी न किसी माध्यम के ज़रिए ही एक जगह से दूसरी जगह पहुँच पाती हैं। जैसे पानी, हवा .... कुछ-न-कुछ होना ज़रूरी है। अगर आवाज़ पैदा करने वाले और सुनने वाले के बीच कुछ भी न हो, हवा भी नहीं, तो सुनने वाले को कुछ सुनाई नहीं देगा। अब यह बात तो हमें यूँ ही मान लेनी पड़ेगी क्योंकि इसकी जाँच प्रयोगशाला में ख़ास साज़ो-सामान के साथ ही किया जा सकता है।

तो यूँ ध्वनि की तरंगें एक जगह से दूसरी जगह पहुँच गईं। जब ये तरंगें हमारे कान के अन्दर तने हुए परदे से टकराती हैं, तो हमें आवाज़ सुनाई पड़ती है।

संचारी और ग्राही

तुम सोच रहे होगे कि ये क्या ऊटपटाँग शब्द आ टपके बीच में। पर क्या करें टेलीफ़ोन के चोंगे में जो दो मुख्य व्यवस्थाएँ काम करती हैं, उनका नाम हमने यही रखा है, उनके काम के मुताबिक। एक हिस्सा जिसमें हम बोलते हैं, सन्देशों को भेजने यानी संचार करने का काम करता है - सो संचारी।

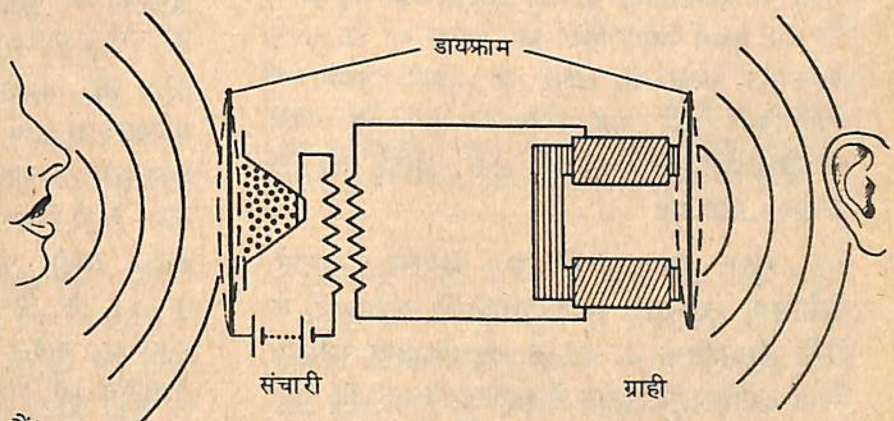




और दूसरा हिस्सा, जिसे हम कान से लगाकर सुनते हैं, सन्देश ग्रहण करता है - इसलिए वह हुआ ग्राही। अब यह सब होता कैसे है?

संचारी को सन्देश भेजने के लिए फ़ोन पर बात करने वाले की आवाज़ से पैदा हो रही ध्वनि तरंगों को विद्युत तरंगों में बदलना होता है। इस काम के लिए संचारी में एक धातु की पतली चक्ती और कार्बन के कणों से भरी एक डिबिया होती है। डिबिया चक्ती से इस तरह सटी होती है कि चक्ती के कम्पन से डिबिया में बन्द कार्बन के कणों पर पड़ने वाले दबाव में बदलाव आता रहता है। यह चक्ती 'डायफ्राम' कहलाती है और चोंगे में जहाँ हम बोलते हैं, वहाँ प्लास्टिक के कवच में बने छेदों के ठीक नीचे लगी होती है। और इस पूरी व्यवस्था में लगातार बहुत कम आवेश का विद्युत बहता रहता है। पर इस विद्युत का बाक़ी घर की बिजली से कोई वास्ता नहीं रहता। इसलिए बिजली चले जाने पर भी फ़ोन काम करता रहता है।

जब हम बोलते हैं फ़ोन में, तो संचारी का डायफ्राम काँपता है। पर यह कम्पन इतना सूक्ष्म होता है कि हमें दिखाई नहीं देता। डायफ्राम जब स्थिर होता है तो डिबिया के अन्दर कार्बन के कण बिखरे रहते हैं। जब कोई बोलता है तो डायफ्राम के कम्पन के दबाव से कण पास-पास आने लगते हैं। अलग-अलग आवाज़ से इन कणों पर पड़ने वाले दबाव में भी बदलाव आता है। इन कणों में से गुज़रने वाली विद्युत धारा इस दबाव के अनुसार कम और ज़्यादा होती रहती है। अलग-अलग मात्रा की ये विद्युत धाराएँ तारों (आसमान के तारे नहीं!) के ज़रिए एक्सचेंज से होते हुए उस व्यक्ति के फ़ोन के संचारी में पहुँचती हैं, जिसे हम फ़ोन कर रहे हैं।



अब यहाँ इन अलग-अलग मात्रा की विद्युत धाराओं को ध्वनि में बदलने की व्यवस्था होती है। इसमें वही तार जिसमें से विद्युत धारा बहती है, एक लोहे की छड़ के इर्द-गिर्द लिपटा होता है। जब अलग-अलग मात्रा में विद्युत स्पन्दन छड़ में से गुज़रते हैं, छड़ एक विद्युत चुम्बक का काम करने लगती है और उसका चुम्बकत्व भी विद्युत की मात्रा के अनुपात में घटता-बढ़ता रहता है। और वह अलग-अलग तीव्रता से ग्राही में लगी लोहे की चक्ती (डायफ्राम) को अपनी ओर खींचती है। इससे इस चक्ती में कम्पन होता है और इस कम्पन से उत्पन्न ध्वनि हमें बोलने वाले की आवाज़ की तरह ही सुनाई देती है।

इस सब प्रक्रिया में एक्सचेंज वह केन्द्र है जिसके ज़रिए फ़ोन कॉल का आदान-प्रदान होता है। पर एक्सचेंज का काम काफ़ी जटिल है। अभी हम खुद इसे समझने की कोशिश कर रहे हैं। जब समझ आ जाएगा तो तुमसे ज़रूर बाँटेंगे।

डॉ. सुब्रह्मण्यन चंद्रशेखर

❑ गुणाकर मुले

किसी समय हमारा देश ज्योतिषशास्त्र में बहुत आगे था। हमारे देश में आर्यभट, ब्रह्मगुप्त, भास्कराचार्य जैसे महान ज्योतिषी एवं गणितज्ञ हुए। पर यह उस ज़माने की बात है जब दूरबीन का आविष्कार नहीं हुआ था। सन् 1609 ई. में गैलीलियो ने पहली दूरबीन बनाई। आगे बड़ी-बड़ी दूरबीनें बनने लगीं। आकाश के तारों का अध्ययन करने के लिए दूसरे कई प्रकार के यंत्रों का भी आविष्कार हुआ। पिछली सदी में फ़ोटोग्राफ़ी का आविष्कार हुआ। इन सब साधनों के कारण पिछली कुछ सदियों में खगोल विज्ञान ने खूब उन्नति की।

यूरोप में खगोल-विज्ञान की उन्नति होने का एक और कारण है। पुराने ज़माने में यूनान और भारत के ज्योतिषियों ने ग्रहों और नक्षत्रों की खोज की थी। पुराने ज्योतिषियों का ख़्याल था कि पृथ्वी विश्व के केन्द्र में स्थिर है। पुराने ज़माने में ज्योतिषियों को ग्रहों और नक्षत्रों के सही आकार-प्रकार और इनकी सही दूरियों का भी अन्दाज़ा नहीं था।

यूरोप के कोपर्निकस, केपलर, न्यूटन, गैलीलियो, लापलास आदि वैज्ञानिकों ने आकाश के पिंडों की गतियों के बारे में नए सिद्धान्त स्थापित किए। इसलिए भी यूरोप में खगोल-विज्ञान की बहुत उन्नति हुई। हमारा देश इस प्रगति से बेख़बर था। अंग्रेज़ी शिक्षा आरम्भ हुई तभी हमारे विद्यार्थियों को इस प्रगति का परिचय मिला। इस सदी के आरम्भ में परमाणु शक्ति की खोज हुई। महान आइंस्टाइन ने अपने आपेक्षिकता सिद्धान्त की स्थापना की। इस सिद्धान्त से विश्व की भौतिक गतिविधियों को समझने में अधिक सहायता मिली। उसके बाद एक नए क्वांटम सिद्धांत की स्थापना हुई। इस सिद्धान्त ने परमाणु और तारों को समझने में और भी अधिक सहायता दी। अब खगोल विज्ञान बहुत आगे बढ़ गया है। आकाश का अध्ययन करने के लिए अब न केवल गणितशास्त्र, बल्कि रसायन और भौतिकी को जानना भी ज़रूरी हो गया है।

गणित, ज्योतिष और भौतिक विज्ञान पर समान रूप से अधिकार रखने वाले ऐसे ही एक प्रख्यात भारतीय वैज्ञानिक हैं डॉ. चंद्रशेखर। जो वैज्ञानिक गणित और भौतिकशास्त्र की सहायता से आकाश की ज्योतियों का अध्ययन करते हैं, उन्हें ज्योतिभौतिकवेत्ता कहते हैं। डॉ. चंद्रशेखर ऐसे ही एक चोटी के ज्योतिभौतिकवेत्ता हैं। ज्योतिभौतिक विज्ञान में उन्होंने कई नई बातें खोजी। इस विषय पर लिखे गए उनके कुछ ग्रंथ सारे संसार में पढ़ाए जाते हैं। वे ज्योतिभौतिकी की एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक पत्रिका के संपादक भी रहे हैं। एक महान ज्योतिभौतिकविद् के रूप में वे संसार में प्रसिद्ध हो चुके हैं। डॉ. चंद्रशेखर को 1983 ई. में भौतिकी का नोबेल पुरस्कार भी मिला।

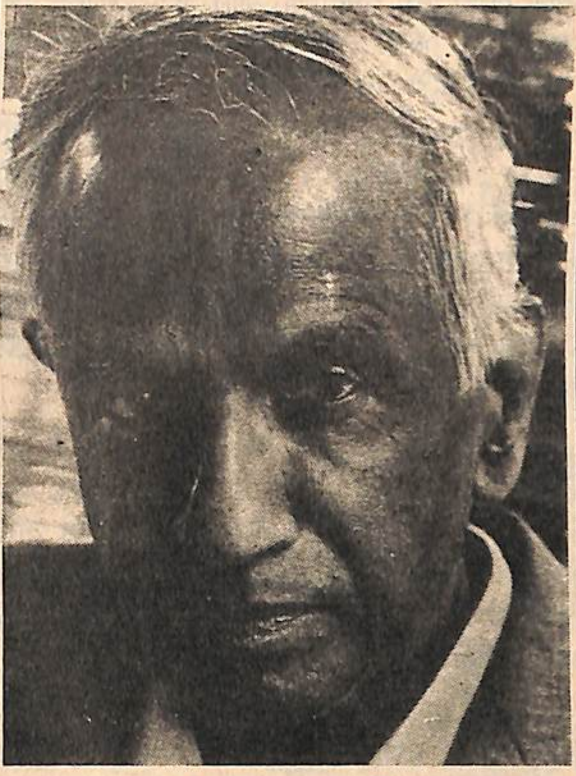
डॉ. चंद्रशेखर का परिवार वैज्ञानिकों के परिवार के रूप में प्रसिद्ध है। उनके पिता सी. सुब्रह्मण्यन अय्यर गणितशास्त्र के ग्रेजुएट थे। वे जब रेलवे-विभाग में एकाउंटेंट जनरल नियुक्त होकर लाहौर गए, तो वहीं पर 19 अक्टूबर, 1910 के दिन सुब्रह्मण्यन चंद्रशेखर का जन्म हुआ था। नोबेल पुरस्कार विजेता प्रख्यात भारतीय वैज्ञानिक डॉ. चंद्रशेखर वेंकट रमन, डॉ. चंद्रशेखर के पिता के छोटे भाई थे। डॉ. चंद्रशेखर के दूसरे चाचा डॉ. सी. रामस्वामी भी वैज्ञानिक हैं और मौसम विज्ञान में शोधकार्य करके उन्होंने नाम कमाया है। डॉ. चंद्रशेखर के तीन भाई भी वैज्ञानिक हैं और अपने-अपने क्षेत्रों में शोधकार्य कर रहे हैं। ऐसे वैज्ञानिक परिवार का सदस्य होना सचमुच ही सौभाग्य एवं गौरव की बात है।

चंद्रशेखर की आरम्भिक पढ़ाई लाहौर में हुई। आगे की पढ़ाई के लिए वे मद्रास गए और वहाँ के प्रसिद्ध प्रेसीडेंसी कॉलेज में नाम लिखाया। गणितशास्त्र में उनकी गहरी रुचि थी। पर पिता की इच्छा के अनुसार उन्होंने 'ऑनर्स' के लिए भौतिक

विज्ञान विषय लिया। इससे गणितशास्त्र में उनकी रुचि कम नहीं हुई। अनुमति लेकर वे गणित की क्लास में भी जाते थे। उसी समय मद्रास विश्वविद्यालय में जर्मन भाषा की पढ़ाई शुरू हुई थी। चंद्रशेखर ने जर्मन का कोर्स भी पूरा किया।

चंद्रशेखर अभी विद्यार्थी ही थे तो उन्होंने एक शोध-निबन्ध तैयार किया। उस समय डॉ. रमन के सभापतित्व में मद्रास में भारतीय विज्ञान परिषद का अधिवेशन हुआ था। चंद्रशेखर ने अपने उस निबन्ध को उस अधिवेशन में पढ़ा। वैज्ञानिकों के ऐसे सम्मेलन में एक विद्यार्थी द्वारा शोध-निबन्ध पढ़ा जाना सचमुच ही बहुत बड़ी बात थी।

चंद्रशेखर ने सर्वोच्च स्थान पाकर मद्रास विश्वविद्यालय से एम.ए. की उपाधि प्राप्त की। आगे इंग्लैंड में पढ़ाई करने के लिए उन्हें भारत सरकार की छात्रवृत्ति मिली। वहाँ कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में प्रो. रॉल्फ और प्रो. डिराक जैसे चोटी के वैज्ञानिकों की देखरेख में उन्होंने शोधकार्य शुरू कर दिया। अपनी प्रतिभा से उन्होंने सबको चकित कर दिया। कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय से उन्होंने, न केवल पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की, बल्कि उन्हें ट्रिनिटी कॉलेज का फैलो भी बनाया गया। फैलो चुना जाना बड़े सम्मान की बात थी। चंद्रशेखर 1930 से 1936 ई. तक कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में रहे।



डॉ. सुब्रह्मण्यन चंद्रशेखर
जन्म : 19 अक्टूबर, 1910
निधन : 21 अगस्त, 1995

डॉ. चंदशेखर का गत 21 अगस्त को अमेरिका के शिकागो शहर में निधन हो गया। यहाँ हम उनकी जीवनी प्रकाशित कर रहे हैं। इसे हमने श्री गुणाकर मुले की पुस्तक 'आधुनिक भारत के महान वैज्ञानिक' से साभार लिया है। - सम्पादक

इसके बाद डॉ. चंद्रशेखर भारत लौटे। उन्होंने बहुत कोशिश की कि उन्हें मद्रास विश्वविद्यालय में प्रोफ़ेसर का पद मिल जाए, किंतु उनकी यह इच्छा पूरी नहीं हुई। इसलिए उन्होंने पुनः विदेश जाने का निश्चय कर लिया। इसी समय उन्हें अमरीका के शिकागो विश्वविद्यालय की ओर से निमंत्रण मिला। देश छोड़ने के पहले उन्होंने एक भारतीय तरुणी ललिता के साथ विवाह कर लिया। ललिता पहले उनके साथ मद्रास विश्वविद्यालय में पढ़ती थीं।

डॉ. चंद्रशेखर 1936 ई. में शिकागो गए। वहाँ उन्होंने येर्क-वेधशाला में भाषण दिए। अमरीका के प्रख्यात खगोलविद् डॉ. ओटो स्ट्रुवे ने उन्हें व्याख्यान देने के लिए आमंत्रित किया था। वहाँ डॉ. चंद्रशेखर की प्रतिभा की पहचान हुई। उन्हें येर्क-वेधशाला में प्राध्यापक का पद मिला। तरक़्क़ी करते-करते वहाँ वे बहुत ऊँचे पद पर पहुँचे। 1952 ई. से वह वहाँ से प्रकाशित होने वाले प्रसिद्ध ज्योतिभौतिकी जर्नल का भी संपादन करते रहे। वहाँ रहते हुए उन्होंने ज्योतिभौतिकी के क्षेत्र में कई नई बातें खोजीं और वैज्ञानिक जगत में ख्याति अर्जित की।

डॉ. चंद्रशेखर का खोजकार्य तारों की रचना और उनके भौतिक गुणधर्मों से सम्बंधित है। आकाश में अनगिनत तारे दिखाई देते हैं। ये सभी तारे आकाशगंगा-मंदाकिनी के सदस्य हैं। हमारी आकाशगंगा में क़रीब डेढ़ अरब तारे हैं। हमारा सूर्य इनमें से एक सामान्य तारा है। विश्व में आकाशगंगा की तरह की करोड़ों मंदाकिनियाँ हैं। और इनकी दूरियाँ? ये इतनी अधिक दूर हैं कि इन मंदाकिनियों से हम तक प्रकाश पहुँचने में करोड़ों

साल लगते हैं। यहाँ हमें जान लेना चाहिए कि प्रकाश की किरणें एक सेकण्ड में 3,00,000 किलोमीटर दूरी तय करती हैं।

इन सब बातों की खोज आधुनिक काल में ही हुई है। आदमी चाँद पर पहुँच गया है। कुछ दिनों के बाद आदमी सौर-मंडल के दूसरे ग्रहों पर भी पहुँचेगा। किंतु तारे और मंदाकिनियाँ हमसे बहुत-बहुत दूर हैं। हम तक पहुँचने वाले विकिरण का अध्ययन करके ही हम उनके बारे में जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

विश्व के तारे और ग्रह उन्हीं पदार्थों से बने हैं, जिन पदार्थों से हमारी पृथ्वी और हमारा सूर्य बना है। इसलिए भौतिकी के बहुत से नियम तारों की गतिविधियों पर भी लागू होते हैं। इन्हीं नियमों की सहायता से डॉ. चंद्रशेखर ने तारों के जीवन के बारे में नई-नई बातें खोज निकाली हैं।

हाँ, तारों का भी अपना जीवन होता है। उनका जन्म होता है और उनकी मृत्यु होती है। संसार में कोई भी चीज़ स्थिर नहीं रहती। डॉ. चंद्रशेखर ने तारों के इसी जीवन, विकास और मृत्यु के बारे में खोज कार्य किया है।

तारों को यह जीवन कैसे मिलता है? हमारा सूर्य एक तारा है। यह सतत जलता रहता है। इतना तेज जलता है कि इसके भीतर का तापमान 1,50,00,000° सेंटीग्रेड पर पहुँच जाता है। सूर्य में कौन-सा ईंधन जलता है? हम अपनी धरती पर देखते हैं कि कोयला, तेल आदि को जलाने से ऊष्मा मिलती है। पर सूर्य में कोयला या तेल नहीं जलता। यदि वह कोयला या तेल से जलता तो कभी का जलकर राख हो जाता। हमारी धरती की आयु कम-से-कम 5 अरब साल आँकी गई है। कम-से-कम इतने समय से सूर्य जलता आया है और आगे अरबों साल तक जलता रहेगा। दूसरे तारों का हाल भी ऐसा ही है।

इसी सदी में हमने परमाणु ऊर्जा की खोज की। एटम बम और हाइड्रोजन बम में कितनी शक्ति होती है, यह सभी ने सुना होगा। यह सब परमाणु की शक्ति का कमाल है। तारों में भी परमाणुओं का ईंधन जलता है। तारे बहुत बड़े होते हैं। इनकी द्रव्यराशि इतनी अधिक होती है कि उसके दाब से तारों के भीतर का तापमान बहुत अधिक बढ़ जाता है। इस ऊँचे तापमान के कारण तारों के एक प्रकार के परमाणु दूसरे प्रकार के परमाणुओं में बदल जाते हैं। इस रद्दोबदल में बहुत सारी ऊर्जा बाहर निकल आती है। तारों की यही ऊर्जा ताप या विकिरण के रूप में हम तक पहुँचती है।

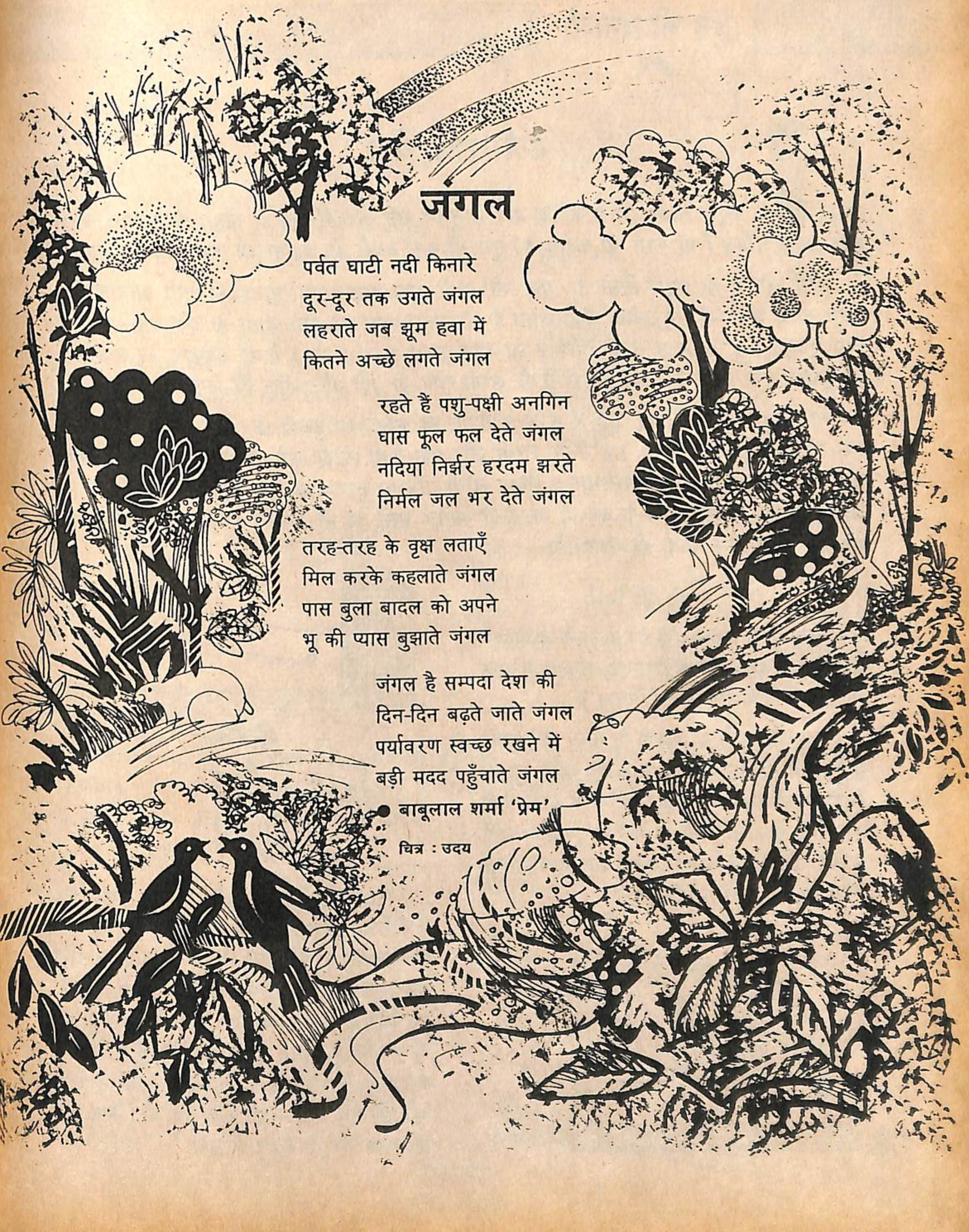
तारों में हाइड्रोजन सबसे अधिक मात्रा में होती है। भीषण दाब और ऊँचे तापमान के कारण यह हाइड्रोजन राशि हीलियम में बदलती रहती है। हाइड्रोजन बम जब फटता है तो यही बात होती है। सूर्य और तारों में भी यही होता है। सूर्य और तारों को करोड़ों-अरबों हाइड्रोजन बमों के बराबर समझ लो।

चूँकि तारे निरन्तर अपने परमाणु-ईंधन को जलाते रहते हैं, इसलिए वे एक जैसे नहीं रहते। समय के साथ उनके स्वरूप में बदलाव होता रहता है। प्राणियों की तरह तारों के जीवन का भी विकास और अन्त होता है। तारों का विकास और अन्त किस प्रकार होता है, यही डॉ. चंद्रशेखर के शोधकार्य का विषय है।

डॉ. चंद्रशेखर ने सिद्ध किया है कि हमारा सूर्य अनन्तकाल तक ऐसा ही बना नहीं रहेगा। इसका जलने वाला ईंधन घट जाएगा तो इसका रूप बदल जाएगा। तब इसका आकार बड़ा होता जाएगा। यह अपने पास के बुध ग्रह को हड़प लेगा। फिर शुक्र ग्रह की बारी आएगी और अन्त में यह हमारी पृथ्वी को भी निगल जाएगा। वह दिन हमारी पृथ्वी के लिए सचमुच ही प्रलय का दिन होगा। पर वह प्रलय का दिन आने के लिए अभी कम-से-कम 5 अरब साल बाक़ी हैं। लेकिन वह दिन आएगा ज़रूर।

लेकिन सूर्य या तारों की यह स्थिति भी बनी नहीं रहती। उसके बाद वह फूला हुआ तारा दूसरे प्रकार के परमाणु-ईंधन का इस्तेमाल करने लगता है और फिर सिकुड़ने लगता है। ऐसी स्थिति में पहुँचने पर हमारा सूर्य भी सिकुड़ने लगेगा। इसके परमाणु टूटकर प्रोटॉन और इलेक्ट्रॉन बन जाएँगे। इस स्थिति वाली द्रव्यराशि को 'प्लाज़्मा' कहते हैं। प्लाज़्मा की स्थिति में कई टन द्रव्यराशि दियासलाई की डिबिया जितनी जगह घेरती है।

(शेष पृष्ठ 40 पर)



जंगल

पर्वत घाटी नदी किनारे
दूर-दूर तक उगते जंगल
लहराते जब झूम हवा में
कितने अच्छे लगते जंगल

रहते हैं पशु-पक्षी अनगिन
घास फूल फल देते जंगल
नदिया निर्झर हरदम झरते
निर्मल जल भर देते जंगल

तरह-तरह के वृक्ष लताएँ
मिल करके कहलाते जंगल
पास बुला बादल को अपने
भू की प्यास बुझाते जंगल

जंगल है सम्पदा देश की
दिन-दिन बढ़ते जाते जंगल
पर्यावरण स्वच्छ रखने में
बड़ी मदद पहुँचाते जंगल

● बाबूलाल शर्मा 'प्रेम'

चित्र : उदय

टेलीग्राफ़ यंत्र

संचार के एक प्रमुख साधन 'मोर्स की' के बारे में तुमने इसी अंक में पढ़ा ही होगा। इसका एक सरल और सस्ता मॉडल (जो काम भी करता है) तुम भी बना सकते हो। बनाना भी बहुत आसान है।

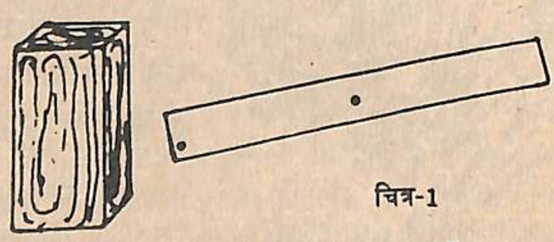
मोर्स 'की' के दो प्रमुख हिस्से हैं - एक 'की' यानी कुंजी तथा दूसरा 'साउण्डर' यानी आवाज़ करने वाला यंत्र। 'की' से सन्देश भेजा जाता है और 'साउण्डर' पर सुना जाता है। 'की' बनाने के लिए एक 12 X 6 X 3 से.मी. आकार का और दूसरा 5 X 3 X 3 से.मी. आकार का लकड़ी का टुकड़ा, एक रबर का छल्ला, 10 से.मी. लम्बी लोहे की पट्टी और कील की ज़रूरत होगी।

साउण्डर बनाने के लिए 12 X 6 X 2 से.मी. का लकड़ी का टुकड़ा, 5 X 3 X 3 से.मी. का एक और लकड़ी का टुकड़ा, 12 से.मी. लम्बी और एक से.मी. चौड़ी लोहे की पट्टी, 6 से.मी. लम्बी लोहे की कील, एनैमल चढ़ा लगभग 2 मीटर लम्बा ताँबे का तार तथा कुछ लम्बी महीन कीलें चाहिए। इसके अलावा टॉर्च के बड़े दो या दो से अधिक सेलों की भी ज़रूरत होगी। लकड़ी के टुकड़ों का नाप थोड़ा कम-ज्यादा हो सकता है।

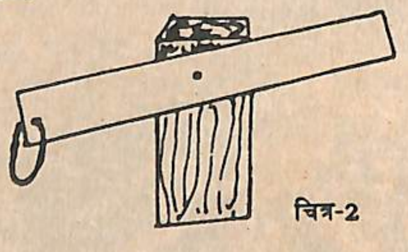
'की' बनाने की विधि

सबसे पहले लम्बी लोहे की पट्टी के बीचोंबीच कील से एक छोटा छेद करो। पट्टी के एक सिरे पर भी ऐसा ही एक छेद करो (**चित्र-1**)।

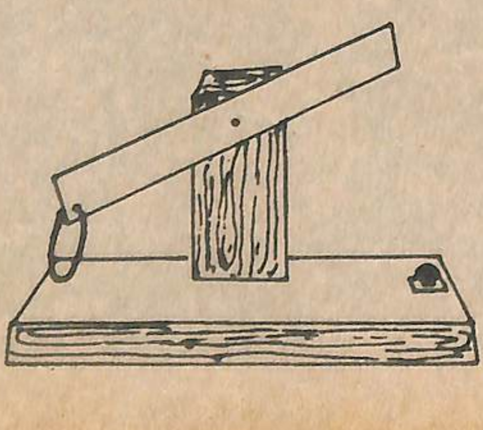
अब इस पट्टी को लकड़ी के सबसे छोटे गुटके में चित्र में दिखाए अनुसार ठोक दो। ध्यान रहे कि पट्टी पर जो कील लगाओ वह छेद की गोलाई से थोड़ी कम मोटी हो ताकि पट्टी आसानी से घूम सके। पट्टी के सिरे वाले छेद में रबर का छल्ला डाल दो। यह छल्ला स्प्रिंग का काम करेगा (**चित्र-2**)।



चित्र-1



चित्र-2

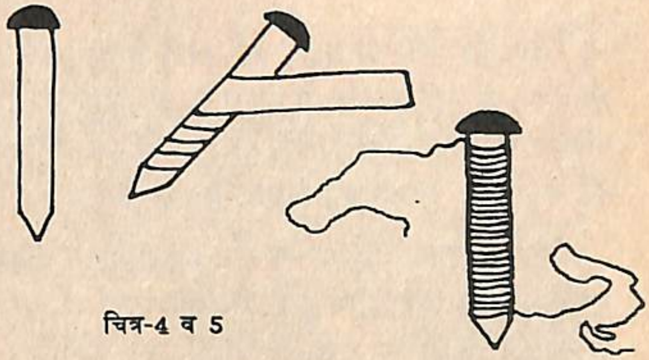


चित्र-3

अब लकड़ी के इस गुटके को बड़े पटिए पर बीचोंबीच चित्र-3 में दिखाए। अनुसार कील से लगा दो। कील इस तरह लगाओ कि गुटका हिले-डुले नहीं। अब पट्टी के जिस सिरे पर रबर का छल्ला डाला है, उस ओर पटिए पर एक कील इस तरह गड़ाओ की वह हुक बन जाए। इस हुक में छल्ले को बाँध दो। पट्टी का दूसरा सिरा झुकाने पर पटिए को जहाँ छूता है, वहाँ एक जूते-चप्पल वाली कील लगा दो (**चित्र-3**)। इस तरह 'की' तो तैयार हो गई।

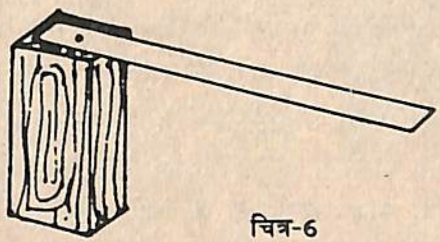
साउण्डर बनाने की विधि

सबसे पहले 6 से.मी. लम्बी लोहे की कील लो और उसकी पूरी सतह पर **चित्र-4** में दिखाए अनुसार काग़ज़ की पट्टी लपेट लो। इस कील पर ताँबे के तार को इस तरह लपेटो कि उसके सभी कुंडल एक-दूसरे से सटे हुए हों। लेकिन तार के दोनों सिरों को लगभग एक-एक फुट खुला छोड़ देना (चित्र-5)।

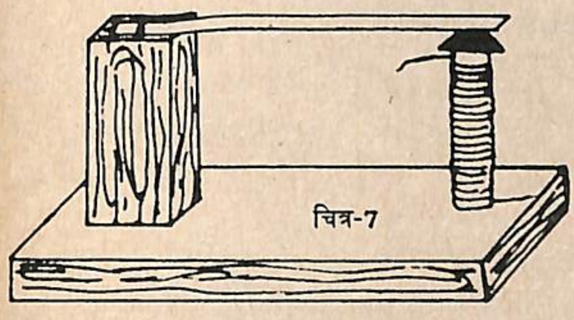


चित्र-4 व 5

अब लोहे की पट्टी के एक सिरे को **चित्र-6** में दिखाए तरीक़े से लकड़ी के छोटे गुटके पर कील से ठोक दो। अब इस गुटके को भी लकड़ी के बड़े पटिए के एक सिरे पर बीचोंबीच कील से ठोक दो। पट्टी के दूसरे सिरे के ठीक नीचे बड़ी कील को (जिसमें तार लिपटा है) भी इसी पटिए पर ठोक दो। इस तरह यह 'साउण्डर' भी तैयार हो गया (चित्र - 7)।



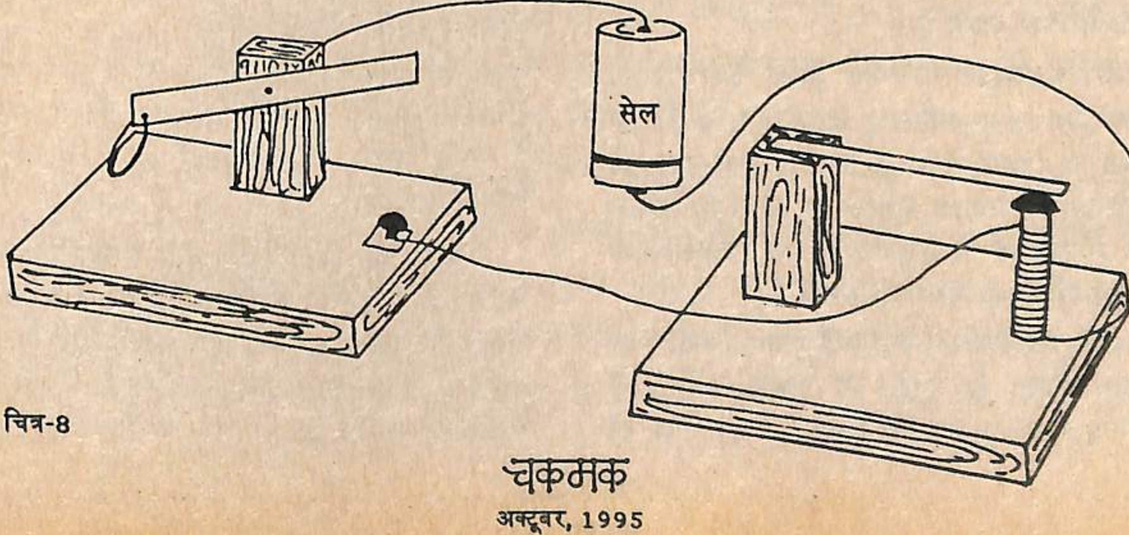
चित्र-6



चित्र-7

अब तार के दोनों खुले सिरों के एनैमल छील दो। फिर **चित्र-8** में दिखाए अनुसार कील के चारों ओर लिपटे तार के एक खुले सिरे को 'की' के पटिए पर लगी कील में बाँध दो। दूसरे सिरे को सेल की निचली सतह से जोड़ दो। तार का एक और टुकड़ा लेकर उसका एक सिरा सेल के ऊपरी सिरे से जोड़ दो और दूसरे सिरे को 'की' की लोहे की पत्ती से। तुम्हारा टेलीग्राफ़ तैयार है।

अब तुम 'की' की लोहे की पत्ती को उँगली से झुकाओ, जैसे ही पत्ती कील को छुएगी, वैसे ही साउण्डर की लोहे की पत्ती झुककर कील के सिरे पर 'टक' की आवाज़ करेगी। जितनी बार 'की' की पत्ती दबाओगे उतनी ही बार साउण्डर की पत्ती भी 'टक-टक' की आवाज़ करेगी।



चित्र-8

कैसे काम करता है यह टेलीग्राफ़

जब हम 'की' की पट्टी को दबाते हैं तो उसके कील को छूते ही बिजली की धारा सेल से चलकर धातु की पट्टी के ज़रिए कील में आती है और वहाँ से तार द्वारा कील से होती हुई सेल में पहुँचती है, जिससे विद्युत परिपथ पूरा हो जाता है। परिपथ पूरा होने पर कील विद्युत-चुम्बक का काम करने लगती है और अपने ऊपर की पट्टी को अपनी ओर आकर्षित करती है। पट्टी को छोड़ते ही विद्युत-परिपथ टूट जाता है।

'टक-टक' की आवाज़ से गुप्त संकेत बनाकर तुम अपने किसी दोस्त से 'बात' कर सकते हो। अपने घर में एक कमरे में 'की' और दूसरे में 'साउण्डर' रखकर क्या तुम इससे बातचीत कर सकते हो? इसके लिए तुम्हें लम्बे तारों की ज़रूरत होगी। और जितने लम्बे तार होंगे उतनी ही बिजली ख़र्च होगी, जिसमें से काफी सारा हिस्सा बेकार जाता है। इसलिए तुम्हें शायद दो से भी ज़्यादा सेल की ज़रूरत हो। हो सकता है ताँबे का प्लास्टिक की परत चढ़ा हुआ तार इस्तेमाल करने से बिजली को बेकार जाने से कुछ हद तक बचाया जा सके। कोशिश कर देखो। लोहे की पट्टी पर अगर ज़ंग लगी हो तो उसे रेगमाल से घिसकर अच्छी तरह से साफ कर लो। ज़ंग कुचालक होती है और परिपथ को पूरा नहीं होने देती। लोहे की पट्टी की जगह स्टोव का पिन भी आज़माकर देखो कि काम चलता है या नहीं।

यह भी जुगाड़ कर सकते हो कि मोहल्ले के दो घरों के बीच तार खींचकर तुम्हारा टेलीग्राफ काम करे। इसके लिए ज़रूरी फेरबदल भी कर लो। हमें लिखना कि क्या-क्या कर पाए और क्या नहीं।

सावधानी:

1. इस प्रयोग को घर की बिजली से करने की कतई कोशिश मत करना।
2. जहाँ तुम सेल और तार को जोड़कर पकड़ते हो, वहाँ तुम्हें थोड़ा गरम लगेगा। इसलिए अगर तीन-चार सेल लगाना पड़ें तो सेल और तार को जोड़ने का कुछ और इन्तज़ाम करो।

(शेष पृष्ठ 36 का)

ऐसी सघन स्थिति वाले तारे को 'सफ़ेद-बौना' तारा कहते हैं। हमारी आकाशगंगा में इस प्रकार के अनेक तारे हैं। हमारा सूर्य भी एक दिन सफ़ेद-बौना तारा बन जाएगा। पर तारे की यह स्थिति भी क़ायम नहीं रहती। कुछ तारों में भयानक विस्फोट हो जाता है। ऐसे तारे को 'सुपरनोवा' तारा कहते हैं। विस्फोट होने पर इन तारों की द्रव्यराशि अंतरिक्ष में फैल जाती है।

डॉ. चंद्रशेखर ने स्पष्ट किया कि तारे के द्रव्यमान का 12 प्रतिशत हाइड्रोजन द्रव्य जब हीलियम की 'राख' में बदल जाता है, तब उस तारे का सुस्थिर जीवनकाल समाप्त हो जाता है। खगोल विज्ञान में तारे के विकासक्रम के इस संधिकाल को चंद्रशेखर-सीमा का नाम दिया गया है।

डॉ. चंद्रशेखर ने इन्हीं सब बातों पर शोधकार्य किया है। तारों की रचना के बारे में उन्होंने एक उत्तम ग्रंथ भी लिखा है। इस ग्रंथ को ख़ूब प्रसिद्धि मिली है। इस विषय में खोजकार्य करने के लिए गणितशास्त्र और भौतिकी का बहुत अच्छा ज्ञान होना ज़रूरी है। इसीलिए डॉ. चंद्रशेखर, न केवल खगोलविद्, बल्कि उच्च कोटि के गणितज्ञ और भौतिकवेत्ता के रूप में भी प्रसिद्ध हुए हैं। गणित में महत्वपूर्ण खोज करने के लिए कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय की ओर से 'एडम्स पुरस्कार' दिया जाता है। डॉ. चंद्रशेखर ने यह पदक एवं पुरस्कार प्राप्त किया है। वे इंग्लैण्ड की रॉयल सोसायटी के भी सदस्य रहे। भारत सरकार ने उन्हें 'पद्म विभूषण' के अलंकरण से भी सम्मानित किया।

भारत की विज्ञान अकादमी ने डा. चंद्रशेखर को 1961 में 'रामानुजन पदक' प्रदान किया था। उसे ग्रहण करने के लिए, एक लम्बे अर्से के बाद, 1968 में वे भारत आए। 1953 ई. में डॉ. चंद्रशेखर अमरीका के नागरिक बन गए थे। ❑❑



प्रणिता गिन्नारे, छठवीं, खापा, नागपुर, महाराष्ट्र

छपते .. छपते

जब चकमक का यह अंक छपाई के अन्तिम चरण में था, तभी 21 सितम्बर को देश भर में देव प्रतिमाओं द्वारा दूध पीने की घटना की ख़बर बिजली की तरह फैल गई। और इसमें मज़ेदार बात यह थी कि ख़बर को फैलाने में टेलीफ़ोन ने बहुत मदद की। चकमक की सम्पादकीय टीम के सदस्यों ने भी मन्दिरों में जाकर इस घटना को देखा। अवलोकन के आधार पर हमारी यह समझ बनी कि इस घटना में कोई असामान्य बात नहीं है, वरन् इसे प्रयोगों द्वारा समझाया जा सकता है। चकमक कार्यालय में हमने संगमरमर और सादे पत्थर के साथ प्रयोग करके देखा। बहरहाल ... इस घटना की अलग-अलग तरह से व्याख्या सामने आ रही है। तुम्हारा क्या ख़्याल है? तुमने उस दिन क्या देखा? अपने अवलोकन, अनुभव हमें लिख भेजो। चकमक के दिसम्बर, 95 अंक में इस पर विस्तार से बातचीत करेंगे। - सम्पादक

चकमक पंजीयन क्रमांक 50309/85 के अंतर्गत भारत के समाचार-पत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा पंजीकृत। डाक पंजीयन क्रमांक BPL/DN/MP/431/95



मानसी वोरा, चौथी, माटुंगा, बम्बई, महाराष्ट्र

रेक्स डी रोज़ारियो की ओर से विनोद रायना द्वारा राजकमल ऑफसेट प्रिन्टर्स, भोपाल से मुद्रित एवं एकलव्य, ई-1/25, अरेरा कालोनी, भोपाल-462016 से प्रकाशित।

संपादक : विनोद रायना